

॥ श्रीः ॥

ॐ धर्मशास्त्र ॐ

# परासरस्मृति ।

भाषा टीका युतः



धर्मशास्त्र, सकल प्रायश्चित्त शुद्धि निर्णय  
मानव धर्म प्रचारकः ।

काशी निवासी पं० गुरुप्रसाद शर्मा  
द्वारा भाषानुवादितः

सोऽयं

✽ बम्बई ✽

वर्णे

बाबू हरिनारायण बर्मा बुक्सेलर,  
कचौडीगली काशी ने छपवाया ।

Printed by J. N. Rao at the Nageshwar Press Benares,

प्रथमवार १५०० ] सन् १९२३ ई० [ मूल्य ॥१॥





॥ श्रीः ॥

❀ धर्म शास्त्र ❀

# पाराशरस्मृतिः ।

भाषा टीका युतः

धर्म शास्त्र विषयक सकल प्रायश्चित्त शुद्धि  
निर्णय मानव धर्म प्रचारकः ।

काशी निवासी पं० गुरु प्रसाद शर्मा  
द्वारा भाषानुवादितः

सं० ५८

❀ बम्बई ❀

बर्गे

बाबू हरीनारायण वर्मा बुकसेलर्स  
कचौडीगली काशीने छपवाया ।

ले० एन राव द्वारा काशी नागेश्वर प्रेस, में छपा ।

प्रथम बार १५०० } सं० १९२३ { मूल्य ॥)



# पराशरस्मृतिभाषाटीकाकी विषयानुक्रमणिका ।

विषय.	पृष्ठांक	विषय.	पृष्ठांक.
अध्याय १. षट्कर्म करनेसे ब्राह्मणोंको सौख्य- लाभ, अतिथिरुत्कारका फल और सामान्यतासे वर्ण चतुष्ट- यका कर्म .... १	१	अध्याय ७. काठ आदिके बनाये पात्रोंकी शुद्धि और रजस्वला स्त्री परस्पर स्पर्श करें तो उसका प्रायश्चित्त	५
अध्याय २. कलियुगमें गृहस्थ के आवश्यक कर्मोंका साधारणतासे कथन .... ५	५	अध्याय ८. अकामसे बंधन आदिमें गौ मरजाय तो उसका प्रायश्चित्त .... ५	५
अध्याय ३. जननमरणके अशौचकी शुद्धिका कथन .... १८	१८	अध्याय ९. भलीभांति गौंकी रक्षा करनेकी इच्छासे बांधने या रोकनेमें गोहत्या होय तो उसका प्रायश्चित्त .... १	१
अध्याय ४. अतिमान से वा अतिक्रोधादिस मरे- हुये स्त्री पुरुषों का दाह आदि करनेमें प्रायश्चित्त, तप्तकृच्छ्र का लक्षण और परिवेदनादि दोषका विचार .... २८	२८	अध्याय १०. अगम्यस्त्री गुमनका चारों वर्णोंको योग्य प्रायश्चित्त .... १	१
अध्याय ५. मेढिया कुत्ते आदिसे काटनेमें शुद्धि, चांडालादिसे मारेहुए ब्राह्मणके देहका स्पर्श करनेमें प्रायश्चित्त और अग्निहोत्रिका देशान्तरमें मरण होय तो उसकी क्रियाका विचार .... ३४	३४	अध्याय ११. अशुद्ध वीर्यआदि पदार्थके भक्षणमें प्रायश्चित्त और शूद्रान्नभक्षणमें ब्राह्मणको प्रायश्चित्त	१
अध्याय ६. माणियोंकी हिंसाका प्रायश्चित्तकथन ३८	३८	अध्याय १२. विष्ठा मूत्र आदि भक्षणमें प्रायश्चित्त और ब्राह्मणहत्याका प्रायश्चित्त .... १	१



श्रीगणेशाय नमः ।



— अथ पाराशरस्मृति —

भाषा टीका सहित ।



अथातोहिमशैलाग्ने देवदारुवनालये ।

व्यासमेकाग्रमासीनमपृच्छन्नृषयः पुरा ॥ १ ॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ मंगलाचरण पूर्वक इस ग्रंथका वयानहारी विद्वान् यों लिखता है कि किसी समय ऋषि लोगों ने हिमालय पर्वत के शिखर पर देवदारु वृक्षों के बन में एकाग्र चिन्ता होकर बैठे हुये व्यासजी से ऐसा प्रश्न किया ॥ १ ॥

मानुषाणांहितं धर्मवर्त्त मानेकलौयुगे ।

शौचाचारं यथावच्च बद्ध सत्यवती सुत ॥ २ ॥

कि हे सत्यवती के पुत्र आप हम लोगों से मनुष्यों के जो धर्म इस कलियुग में हितकारी हो सकते हैं तथा उनके शौच और आचार भी विधि पूर्वक कहें ॥ २ ॥

१ यद्यपि इस ग्रंथका नाम पाराशरस्मृति ऐसा सुनने से पहिले पहिल हर एक मनुष्य के मनमें आवेगा कि इसे पराशरजीने रचा है । परन्तु जब इस ग्रन्थका जोड़ा सा भी पढ़ेंगे तो स्पष्ट प्रतीत होगा कि पराशरजीने जो धर्मकी बातें व्यासजी और उनके साथी ऋषियों को सुनाई थीं उन सबों को किसी मनुष्य ने अथवा उन्हीं ऋषियों में से अन्यतम ने इकट्ठी कर लोकप्रकार के निमित्त लिखकर ग्रंथ रच दिया है ।



तच्छ्रुत्वा ऋषि वाक्यं तु सशिष्योऽग्न्यर्कं सन्निभः ॥

प्रत्युवाच महातेजाः श्रुतिस्मृतिविशारदः ॥ ३ ॥

ऋषियों के इस वाक्य को सुनकर अपने शिष्यों के मध्य में बैठे तथा अग्नि और सूर्य की भांति अति तेजस्वी रूप देख पड़ते हुये और श्रुति स्मृति ( अर्थात् वेद और धर्म शास्त्र ) में परम विपुण श्रीव्यास जी बोले ॥ ३ ॥

न चाहं सर्वतत्त्वज्ञः कथं धर्मवदाम्यहम् ॥

अस्मात्मितवै प्रष्टव्य इति व्यासः सुतो वदत् ॥ ४ ॥

मैं सम्पूर्ण बातों का तत्त्व नहीं जानता तो धर्म क्यों कर कह सकूँ इस हेतु हमारे पिता से ही पूछना चाहिये ऐसा पराशर के सुत व्यासजी ने कहा ॥ ४ ॥

ततस्ते ऋषयः सर्वे धर्मतत्त्वार्थकाक्षिणाः ॥

ऋषि व्यासं पुरस्कृत्य गता वदरिकाश्रमम् ॥ ५ ॥

अनन्तर वे सब ऋषि लोग धर्म तत्त्व जानने की इच्छा से व्यासजी को अगाड़ी कर वदरिका श्रम को चल पड़े ॥ ५ ॥

नाना पुष्पलताकीर्णफलपुष्पै रलंकृतम् ।

नदी प्रसूवणोपेतं पुण्यतीर्थोपशोभितम् ॥ ६ ॥

वहाँ पर अनेक भांति की फूली हुई लतायें फैल रही थीं, विविध प्रकार के फल और फूलों से बड़ी शोभा हो रहा था, नदियों भरने चल रहे थे, अच्छे २ पवित्र तीर्थों से आश्रम सुहावना हो रहा था ॥ ६ ॥

मृगपक्षिनिनादाढ्यं देवतायतनावृतम् ॥

यक्षगंधर्वसिद्धैश्च नृत्यगीतैरलं कृतम् ॥ ७ ॥

बहुत से मृग और पक्षियों के शब्द चारों ओर सुनाई दे रहे थे, देवताओं के मंदिरों को घेरासा वंश रहा था यक्ष गंधर्व सिद्ध लोगों के नृत्य और गान से अधिकतर शोभा हो रही थी ॥ ७ ॥



तस्मिन् नृषिसभामध्ये शक्ति पुत्रं पराशरम् ॥

सुशासीनं महातेजा मुनिमुख्यगणैर्वृतम् ॥ ८ ॥

ऐसे आश्रम के बीच ऋषियों की जो सभा हो रही थी उसमें मुख्य २ मुनियोंके मध्य कुछ पूर्वक बैठे हुए शक्ति के पुत्र श्री पराशर जीको बड़े तेजस्वी ॥ ८ ॥

कृतांजलिपुटोभूत्वा व्यासस्तु ऋषिभिः सह ॥

प्रदक्षिणाभिवादैश्चस्तुतिभिः समपूजयेत् ॥ ९ ॥

श्रीव्यासजीने ऋषिगणों समेत दोनों हाथ जोड़कर तथा प्रदक्षिणा और प्रणाम करके एवं स्तुतियों से भी सन्तुष्ट किया ॥ ९ ॥

अथ संतुष्टहृदयः पराशरमह मुनिः ॥

आहसुस्वागतं ब्रूही त्यासीनो मुनिपुंगवः ॥ १० ॥

तब पराशर महामुनिने अपने हृदय में बहुत प्रसन्न होकर कहा कि अपने शुभागमनका वृत्त कहिये अनन्तर मुनियों में श्रेष्ठ १०

कुशलं सम्यगित्युक्त्वा व्यासः पृच्छत्यनंतरम् ॥

यदि जानासि मे भक्तिं स्नेहाद्वा भक्तवत्सल ॥ ११ ॥

श्रीव्यासजी मली भांति कुशल हैं ऐसा कह कर बैठे और यो बोले कि हे भक्तवत्सल ! यदि आप मेरी भक्ति अपने में जानते हैं अथवा आपका स्नेह मुझ पर है तो ॥ ११ ॥

धर्मकथय मे तात अनुग्राह्यो ह्यहं तव ॥

श्रुता मे मानवाधर्मा वासिष्ठाः काश्यपास्तथा ॥ १२ ॥

हे तात ! मुझे धर्म बतलाइये क्योंकि मैं आपका अनुग्रह पात्र हूँ मेने मनु, वसिष्ठ, काश्यप, ॥ १२ ॥

गार्गीया गौतमीयाश्च तथा चौशनसाः स्मृताः ॥

अत्रेर्विष्णोश्च संवर्ता दत्ता दंगिरास्तथा ॥ १३ ॥

गर्ग गौतम. उशाना आत्रि. विष्णु संवर्त; दत्त, अंगिरा, ॥ १३ ॥



शातातपाच्चहारीताद्याज्ञवल्क्यास्तथैव च ॥

आपस्तम्ब कृता धर्माः शंखस्यलिखितस्य च ॥ १४ ॥

शातातप, हारीत, याज्ञवल्क्य, आपस्तम्ब, शंख, और लिखित ॥ १४ ॥

कात्यायनकृताश्चैव तथा प्राचेतसाम्मुनेः ॥

श्रुताह्येते भवत्प्रोक्ताः श्रुत्यर्थमिदं विस्मृताः ॥ १५ ॥

कात्यायन, तथैव प्राचेतस मुनि के कहे हुए धर्मों को सुना है और आपने जो श्रुति अर्थात् वेदों के अर्थ मुझ से कहे हैं उन्हें भी मैं नहीं भूला हूँ ॥ १५ ॥

अस्मिन्मन्वन्तरे धर्माः कृतत्रेतादिके युगे ॥

सर्वे धर्माः कृते जाताः सर्वे नष्टाः कलौ युगे ॥ १६ ॥

इसी \* मन्वन्तर में सत्ययुग और त्रेतादियुग के जो धर्म हैं उनमें से सत्ययुग में तो सारे धर्म थे और कलियुग में सब के सब दूर हो गये हैं ॥ १६ ॥

चातुर्वर्ण्यसमाचारं किञ्चित्साधारणं वद ॥

चतुर्णां मपि वर्णानां कर्त्तव्यं धर्मकोविदैः ॥ १७ ॥

चारों वर्णों का जो कुछ साधारण आचार है सो कहिए कि जिसे धर्म निपुण चारों वर्णों के लोग करें ॥ १७ ॥

ब्रूहि धर्मस्वरूपज्ञसूक्ष्मं स्थूलं च विस्तरात् ॥

व्यास वाक्यावसाने तु मुनिमुख्यः पराशरः ॥ १८ ॥

आप धर्मका स्वरूप जानते हैं इस हेतु सूक्ष्म और स्थूल दोनों धर्म विस्तार पूर्वक कहिए व्यासकी बातें हो चुकने पर मुनियों में प्रधान पराशर जी ॥ १८ ॥

\* अर्थात् वैवस्वतमन्वन्तरमें और देवताओंके ७१ युगोंका एक मन्वन्तर होता है ।

धर्मस्य निर्णयं प्राह सूक्ष्मं स्थूलं च विस्तरात् ॥



शृणुपुत्रपूवक्ष्यामि शृण्वंतुमुनयस्तथा ॥ १९ ॥

धर्म का शुद्ध और स्थूल दोनों विध निर्णय विस्तार पूर्वक यों कहने लगे कि हे पुत्र ! तुम सुनो और सारे मुनि गण भी सुनें ( इस भांति श्रोताओं को सावधान किया ) ॥ १९ ॥

कल्पेकल्पे क्षयोत्पत्याब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥

श्रुतिस्मृति सदाचारनिर्णेतारश्चसर्वदा ॥ २० ॥

हर एक कल्प ( संसारोत्पत्ति ( काल में ब्रह्मा, विष्णु, और महेश्वर ( शिव ) ये तीनों क्षीण हों कर उत्पन्न होते और श्रुति ( वेद ) स्मृति, ( धर्मशास्त्र ) तथा सदाचार, ( होलिकादि ) का निर्णय नदा करते हैं ॥ २० ॥

नकश्चिद्वेदकर्त्ताचवेदस्मृत्वाचतुर्मुखः ।

तथैवधर्मान्स्मरतिमनुः कल्पांतरैतरे ॥ २१ ॥

वेद का कर्त्ता कोई नहीं है चतुर्मुख ब्रह्मा ने वेदको स्मरण किया इसी भांति प्रति कल्पांतर में मनुजी धर्मों का स्मरण करते हैं ॥ २१ ॥

अन्येकृतयुगेधर्मास्त्रेतायांद्वापरयुगे ॥

अन्येकलियुगे पुंसांयुगरूपानुसारतः ॥ २२ ॥

सत्ययुग में पुरुषों के धर्म और ही थे और त्रेता में कुछ और तथा द्वापर में उससे भी भिन्न थे इसी भांति कलियुग के धर्म दूसरे ही हैं जैसा युग तैसे धर्म होते हैं ॥ २२ ॥

तपः परं कृतयुगे त्रेतायांज्ञानमुच्यते ॥

द्वापरेयज्ञमेवाहुर्दानमेकंकलौ युगे ॥ २३ ॥

सत्य युग में तपस्या ही बड़ा धर्म था त्रेता में ज्ञान को परम धर्म मानते थे द्वापर में यज्ञ को और कलियुग में केवल दान ही धर्म है ॥ २३ ॥

कृतेतुमानवाधर्मास्त्रेतायांगौतमाः स्मृताः ॥



द्वापरे शांखलिखिताः कलौपाराशरः स्मृताः ॥ २४ ॥

सत्ययुग में मनु के कहे हुये धर्म, त्रेता में गौतम के, द्वापर में संख लिखित के, और कलियुग में पाराशर के धर्म माने जाते हैं ॥ २४ ॥

त्यजेद्देश कृतयुगे त्रेतायां श्रापमुत्सृजेत् ॥

द्वापरे कुलमेकं तु कर्त्तारं तु कलौयुगे ॥ २५ ॥

सत्ययुग में पाप करनेवाले के देश को छोड़ना चाहिए त्रेता में उसके गांधको, द्वापर में उसके कुलको और कलियुग में उस करने वाले ही को त्यागना होता है ॥ २५ ॥

कृते संभाषणाद्देव त्रेतायांस्पर्शनेन च ॥

द्वापरे त्वन्नमादाय कलौ पतति कर्मणां ॥ २६ ॥

सत्ययुग में पापी के साथ बोलनेही से त्रेता में स्पर्श करने से द्वापर में उसका अन्न लेनेसे मनुष्य पतित होता है और कलियुग में तो पाप कर्म करने सेही पतित होता है अन्य था नहीं ॥ २६ ॥

कृते तात्त्वणिकः शापस्त्रेतायां दशभिर्दिनैः ॥

द्वापरे चैकमासेन कलौ संवत्सरेण तु ॥ २७ ॥

सत्ययुग में कोई सरापे तो उसीक्षण उसका फल हो जाता है त्रेता में दसदिन के बीच होता, द्वापर में एक महीनेपर और कलियुग में बरसभर के अन्तर होता है ॥ २७ ॥

अभिगम्य कृतेदानं त्रेतास्वाहूय दीयते ॥

द्वापरे या च मां नायसेवया दीयते कलौ ॥ २८ ॥

सत्ययुग में आह्वण के घरपर जाकर दान देते हैं त्रेता में बुलाकर देते द्वापर में मांगने पर देते, और कलियुग में जो सेवाकरे उसे देते हैं ॥ २८ ॥

अभिगम्योत्तमदानमाहू यैव तु मध्यमम् ॥

अधमं याचमानाय सेवादानं तु निष्फलम् ॥ २९ ॥



किसी के घर पर जाकर देना उत्तम दान है, बुलाकर देना मध्यम है, मांगने पर देना अधम दान है और सेवाकरने पर जो दिया वह निष्फल होता है ॥ २९ ॥

जितोधर्मोह्य धर्मेण सत्यं चैवानृतेनच ॥

जिताश्चौरैश्चराजानः स्त्रीभिश्च पुरुषाजिताः ॥ ३० ॥

उस कलियुग में धर्म से अधर्म प्रबल होता है सच्चे से झूठा राजाओं से चोरलोग, और पुरुषोंसे स्त्री प्रबल होती है ॥ ३० ॥

सीदंतिचाग्निहोत्राणि गुरु पूजापूणश्रयति ॥

कुमार्यश्चपूसूयंते तस्मिन्कलियुगे सदा ॥ ३१ ॥

अग्निहोषके कर्म ढीले पड़जाते, गुरुओं की पूजा नष्ट हो जाती है और कारी लड़कियों को बच्चे जन्मते हैं यही बर्ताव सदा हो जाता है ॥ ३१ ॥

कृतेत्वस्थिगताः प्राणास्त्रेतायां मांसमाश्रिताः ॥

द्वापरे रुधिरं चैवकलौत्वन्नादिषुस्थिताः ॥ ३२ ॥

सत युग में प्राण हड्डियों में रहता है, त्रेताके मध्यमांसोंमें द्वापर में रुधिर के बीच और कलियुग में अन्नादि ( खानेपीने ) में प्राण रहता है ॥ ३२ ॥

युगेयुगे च येधर्मास्तत्रतत्र च ये द्विजाः ॥

तेषांनिंदा न कर्तव्या युगरूपाहितेद्विजाः ॥ ३३ ॥

हर एक युग के जो धर्म हैं और उन २ युगों में जो द्विज होते हैं उनकी निन्दा करनी योग नहीं क्योंकि वे युगों के रूपही हैं ॥ ३३ ॥

युगेयुगेतुसामर्थ्यशेषमुनि विभाषितम् ॥

पराशरेणचाप्युक्तं प्रायश्चित्तं विधीयते ॥ ३४ ॥

युग २ के सामर्थ्य तथा जो विशेष बातें हैं उन्हें और अनेक मुनियों ने अथवा पराशरने भी कहा है उससे जो कुछ शेषार्थवात् न्यून वा अधिक हो उसी में प्रायश्चित्त होता है ॥ ३४ ॥



अथ पराशरस्मृतिः ।

अहमद्यैवतत्सर्वं सनुस्मृत्यन्वयीषिवः ॥

चातुर्वर्ण्यसमाचारं शृण्वन्तुमुनिपुंगवाः ॥ ३५ ॥

मैं आजही उन सबों की सुझकर आपलोगों से चारोंवर्णों के समाचार कहता हूँ हे ऋषि भ्यः ! आप लोग सुनें ॥ ३५ ॥

पराशरमतं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ॥

चितितं ब्राह्मणार्थाय धर्मसंस्थापनाय च ॥ ३६ ॥

यह पराशरका कथित धर्मशास्त्र पाठ करने से पुण्य जनक होता है अनुष्ठान करने से पवित्र स्वर्गदायक होता है और नरकादि निवृत्ति करने से पापनाशक है ब्राह्मणों के निमित्त और धर्मस्थापन के लिए चितित हुआ है ॥ ३६ ॥

चतुर्णामपि वर्णानामाचारो धर्मपालकः ॥

आचारः शृष्टदेहानां भवेद्धर्मः पराङ्मुखः ॥ ३७ ॥

चारों वर्णों का धर्म आचार से ही पालित होता है और जिनके शरीर आचार सञ्ज्ञ हैं उनसे धर्म भी विवृत हो जाता है ॥ ३७ ॥

षट्कर्मभिरतो नित्यं देवतातिथिपूजकः ॥

हुतशेषं तु भुजानो ब्राह्मणो नावसीदति ॥ ३८ ॥

छकर्मों ( येकर्म आगे कहे जावेंगे ) में सदा रत रहने द्वारा और देवता तथैव अतिथियों का पूजन करने द्वारा और हुतशेष अर्थात् वैश्वदेवकर्म से बचा हुआ अन्न भोजन करनेवाला जो ब्राह्मण है उसे दोष नहीं होता है ॥ ३८ ॥

संध्यास्नानं जपो होमो देवतानां च प्रपूजनम् ॥

आतिथ्यं वैश्वदेवं च षट्कर्माणि दिने दिने ॥ ३९ ॥

तीनों संध्याओं में स्नान, रात्रि में जप, होम, देवताओं का पूजन अतिथि सत्कार और वैश्वदेव, ये छको कर्म प्रतिदिन करनीय हैं ॥ ३९ ॥

इष्टोवायदिग्रोहप्यो मूर्खः पांडित्यवत् ॥



संप्राप्तो वैश्वदेवांते सोतिथिः स्वर्गसंक्रमः ॥ ४० ॥

भिन्न हो अथवा शत्रु, सूर्य हो वा पण्डित चाहे कैसा भी लुब्ध वैश्वदेव के अंत में आजावे तो वह स्वर्ग प्राप्त कराने द्वारा अतिथि कहलाता है ॥ ४० ॥

दूराच्चोपगतंश्रांतं वैश्वदेवउपरिस्थितम् ॥

अतिथितं विजानीयान्नातिथिः पूर्वमागतः ॥ ४१ ॥

जो दूरसे आया हो, थकाहो, और वैश्वदेव के समय पहुंचा हो उसे अतिथि जानो न कि जो पहिले कभी आगया हो ॥ ४१ ॥

नपृच्छेद्गोत्रचरणो स्वाध्यायं च व्रतानि च ॥

हृदयं कल्पयेत्तस्मिन्सर्वदेवमयोहिसः ॥ ४२ ॥

ऐसे अतिथि का गोत्र और शास्त्र तथा वेद और व्रत न पूछना चाहिए उसपर अपना चित्त लगावे वही सर्व देव स्वरूप होता है ॥ ४२ ॥

नैकग्रामीणमतिथिं संगृह्णीत कदाचन ॥

अनित्यमागतोयस्मात्तस्मादातिथि रुच्यते ॥ ४३ ॥

एकही गांव के रहने वाले को अतिथि समझ के कभी न लेना क्योंकि अतिथि का अर्थ यही है कि जो नित्य न आवे ॥ ४३ ॥

अतिथिंचसंप्राप्तं पूजयेत्स्वागतादिना ॥

तथासनप्रदानेनपादप्रक्षालनेन च ॥ ४४ ॥

उक्त समय में आवे हुये अतिथि को स्वागत आदि कथन कर्के आसन देने से और पांव धोने से पूजन करे ॥ ४४ ॥

श्रद्धयाचान्नदानेन प्रियप्रश्नोत्तरेण च ॥

गच्छतश्चानुयानेन प्रीतिमुत्पादयेद्गृही ॥ ४५ ॥

श्रद्धा पूर्वक भोजन देने से उसकी प्रिय बातें पूछने और कहने से और जब चलने लगे तो उसके पीछे पीछे कुछ दूर पहुंचाने से उसकी प्रसन्नता गृहस्थ को करनी चाहिये ॥ ४५ ॥



अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्त्तते ॥

पितरस्तस्यनाऽश्नति दशवर्षाणि पञ्च च ॥ ४६ ॥

जिसके घरसे अतिथि निराश होकर चला जाता है उसके पितर लोग पंद्रहवर्ष भोजन नहीं लेते ॥ ४६ ॥

काष्ठाभारसहस्रेण घृतकुंभ शतेन च ॥

अतिथिर्यस्य भग्नाशस्तस्य होमो निरर्थकः ॥ ४७ ॥

जिस्का अतिथि निराश हुआ वह चाहे १००० भार ईधनसे और १०० घड़े घीसे भी होम करे तो भी वह निष्फल है ॥ ४७ ॥

सुक्षेत्रे वापयेद्बीजं सुपात्रेनाक्षिपेद्धनम् ॥

सुक्षेत्रे च सुपात्रे च ह्यसंदर्त्तनं नश्यति ॥ ४८ ॥

अच्छे खेत में बीज बोना और सुपात्रको धन देना क्योंकि सुखेन और सुपात्र में बोया और दिया हुआ नष्ट नहीं होता ॥ ४८ ॥

अपूर्वः सत्रतीविप्रो ह्य पूर्वश्चातिथिस्तथा ॥

वेदाभ्यासरतो नित्यमपूर्वो हि दिने दिने ॥ ४९ ॥

अच्छे व्रतवाला ब्राह्मण अतिथि और वेदाभ्यास में रत रहने द्वारा मनुष्य ये प्रतिदिन भी आवें तो इन्हें अपूर्वही अर्थात् नया आया हुआ जानना ॥ ४९ ॥

वैश्वदेवे तु संप्राप्ते भिक्षुके गृहमागते ॥

उद्धृत्य वैश्वदेवार्थं भिक्षां दत्वा विसर्जयेत् ॥ ५० ॥

वैश्वदेवके समय में यदि कोई भिक्षुक घर में आजावे तो वैश्वदेवके लिये अन्न निकाल कर शेष उस भिक्षारीको भिक्षा देकर बिदा कर देना ॥ ५० ॥

यतिश्च ब्रह्मचारी च पक्वान्नस्वामिनावुभौ ॥

तयोरन्नमदत्वा च भुक्त्वा चांद्रायणं चरेत् ॥ ५१ ॥

पके हुए अन्नके स्वामी सन्यासी और ब्रह्मचारी है इसलिये यदि



उन्को विना दियेही आप भोजन करे तो चान्द्रायण व्रतकरना उचित है

दद्याच्चभिक्षात्रितयं परिव्राट्ब्रह्मचारिणे ॥

इच्छयाच ततो दद्याद्विभवे सत्यवारितम् ॥ ५२ ॥

संन्यासी और ब्रह्मचारी इन दोनों को पहिले तीनों भिक्षा अर्थात् जल, अन्न, पुनः जल देकर यदि सामर्थ्य हो तो यथा रुचि और भी वस्तु देवै कुछ निषेध नहीं है ॥ ५२ ॥

यतिहस्तेजलं दद्याद्भैक्ष्यंदद्यात् पुनर्जलम् ॥

तद्भैक्ष्यंमेरुणातुल्यं तज्जलंसागरोपमम् ॥ ५३ ॥

यती के हाथ में पहिले जल देना तब भिक्षा देनी अनन्तर पुनः जल देना तो वह भिक्षा मेरु पर्वत के तुल्य होती है, और वह जल समुद्र के तुल्य होता है ॥ ५३ ॥

यस्यच्छत्रं हयश्चैव कुंजरारोहमृद्धिमत् ॥

ऐन्द्रस्थानमुपासीत् तस्मात्तंनविचारयेत् ॥ ५४ ॥

जिसके छत्र, घोड़े, हाथी, और बड़े मूढ्य के सिंहासनादि होते ऐसे ऐन्द्रस्थान (इन्द्रके तुल्य पदवी) पर वह पहुंचता है इस हेतु उस (यति के विषय) का विचार न करना ॥ ५४ ॥

वैश्वदेवकृतंदोषं शक्तोर्भिक्षुर्पोहितुम् ॥

नहिभिक्षुकृतंदोषं वैश्वदेवोव्यपोहानि ॥ ५५ ॥

वैश्वदेव में जा दोष किया हो उसे भिक्षु हटा सक्ता है परन्तु भिक्षुक के प्रति जो दोष किया हो उसे वैश्वदेव नहीं छुड़ा सक्ता है ॥ ५५ ॥

अकृत्वावैश्वदेवंतु ये भुंजंति द्विजातयः ॥

तेषामन्नंनभुंजंती काकयोनिर्ब्रजंति ते ॥ ५६ ॥

जो द्विजाति (ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य) वैश्वदेव किए विना ही भोजन कर लेते हैं उनका अन्न भोजन न करना चाहिये क्योंकि कि वे काक योनि में जाते हैं ॥ ५६ ॥



अकृत्वा वैश्वदेवं तु भुञ्जते ये द्विजाधमाः ॥

सर्वे ते निष्फला होयाः पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥ ५७ ॥

वैश्वदेव विना कियेही जो द्विजाधम भोजन करते हैं वे सब निष्फल होते और अपवित्र नरक में गिरते हैं ॥ ५७ ॥

वैश्वदेवविहीना ये आतिथ्येन बहिष्कृताः ॥

सर्वे ते नरकं यांति काकयोर्निव्रजन्ति च ॥ ५८ ॥

जो वैश्वदेव कर्म से रहित हैं और अतिथि सत्कार से बहिष्कृत हैं वे सब नरक और काक योनि को जाते हैं ॥ ५८ ॥

शिरोवेष्टयतु यो भुङ्क्ते दक्षिणाभिमुखस्तु यः ॥

वामपादे करं न्यस्य तद्वैरक्षांसि भुञ्जते ॥ ५९ ॥

शिर में वस्त्र लपेट कर जो भोजन कर्ता तथा बायें पांव पर हाथ रख कर जो भोजन कर्ता है सो मानो राक्षस भोजन कर्ता है ॥ ५९ ॥

यतयेकांचनं दत्वा तांबूलं ब्रह्मचारिणे ॥

चौरेभ्योऽप्यभयं दत्वा दातापि नरकं व्रजेत् ॥ ६० ॥

यदि सन्यासी को सोना दे, ब्रह्मचारी को पान दे और चोरों को अभय दान दे तो वह दाता भी नरक को प्राप्त होता है ॥ ६० ॥

शुक्लवस्त्रं च यानं च तांबूलं धातुमेव च ॥

प्रतिगृह्य कुलं हन्यात् प्रति गृह्णाति यस्य च ॥ ६१ ॥

जो यती अथवा ब्रह्मचारी शुक्लवस्त्र सवारी, तांबूल, और धातु ( सोना चांदी आदि ) दान ग्रहण करे तो वह अपने और देने वाले दोनों के कुलकी हत्या कर्ता है ॥ ६१ ॥

चौरो वा यदि चांडालः शत्रुर्वा पितृ घातकः ॥

वैश्वदेवे तु संप्रप्तं सोतिथिः स्वर्गसंक्रमः ॥ ६२ ॥

चोर चांडाल, शत्रु, अथवा पितृ घाती भी हो, और वैश्वदेव के समय में अजावै तो वह स्वर्ग प्रद अतिथि होता है ॥ ६२ ॥



नगृह्णातितुयोविप्रो अतिथिं वेदपारगम् ॥

अदत्तं चान्नमात्रं तु भुक्त्वा भुंक्ते तु किलिषम् ६३ ॥

जो ब्राह्मण वेद पारगामी अतिथि को नहीं लेता और बिना दिया हुआ ही अन्न खाना है, तो वह पाप भोजन करता है ॥ ६३ ॥

ब्राह्मणस्य सुखं क्षेत्रं निरूपरम् कंठकम् ॥

वापयेत्सर्ववस्तूनि साकृषिः सर्वकामिका ॥ ६४ ॥

ब्राह्मण का सुख उस खेत के तुल्य है, कि जिसमें काटे और जलर न हों इस हेतु उस में सब प्रकार के बीज घोने चाहिये क्योंकि वह लेती सब कामना देती है ॥ ६४ ॥

अव्रताह्यनधीयाना यत्र भैरवचरद्विजाः ॥

तंग्रामदंडयेद्राजा चौरभक्तप्रदो हिसः ॥ ६५ ॥

जिस गांव में अनपढ़े और बिना व्रत क द्विज रहते हों उस ग्रामको राजा दंड देवे, क्योंकि वह चोरों का खिलाने हारा है ॥ ६५ ॥

क्षत्रियो हि प्रजारक्षन् शस्त्राणिः प्रदंडवान् ॥

निश्चित्य परसैन्यानि क्षितिधर्मेण पालयेत् ॥ ६६ ॥

क्योंकि क्षत्रिय को चाहिये कि प्रजाओं की रक्षा करे, हाथ में शस्त्र धारण किये ही रहे, दंड - ली भांति दे, और दूसरे की सेनाओं को जीत कर धर्म पूर्वक पृथ्वी को पालन करे ॥ ६६ ॥

नश्रीः कुलक्राज्जाता भूषणोल्लिखितोऽपि वा ॥

खड्गेनाक्रम्य भुंजीत वीरभोग्या वसुंधरा ॥ ६७ ॥

किमी के कुलमें परंपरा से लक्ष्मी नहीं जन्मी है, और न किसी के भूषण में लिखी है, इस हेतु अपने खड्ग के बल से लेकर उसका भोग करे, क्योंकि वसुंधरा वीरों ही के भोगने योग्य है ॥ ६७ ॥

पुष्पं पुष्पं विचिनु यन्मूत्रच्छेदं न कारयेत् ॥

मालाकार इवाऽरामे न यथांगारकारकः ॥ ६८ ॥



जिस भांति माली फुलवारी में वृक्षों का केवल फूल चुनता है  
जड़ समेत नहीं उखाड़ लेता इसी भांति राजा भी प्रजा से थोड़ा र  
बन छेदे और कोला बनाने हारों की भांति जड़ खूब से उनका  
उच्छेद न करे ॥ ६८ ॥

लाभकर्मतधारत्नं गवांचपरिपालनम् ॥

कृषिकर्मचवाणिज्यं वैश्यवृत्तिरुदाहृता ॥ ६९ ॥

वैश्यों की वृत्ति यह है कि, ज्योहार, देना, रत्नों का क्रय  
विक्रय करना गौओं को पालना, और वाणिज्य करना ॥ ६९ ॥

शूद्रस्यद्विजशुश्रूषा परमोधर्म उच्यते ॥

अन्यथाकुरुतर्किंचित्तद्भवेत्तस्यनिष्फलम् ॥ ७० ॥

शूद्रका परम धर्म द्विजों की सेवा करना है इससे अन्यथा जो  
कुछ वह करता है सो सब उसका निष्फल होता है ॥ ७० ॥

लवणं मधुतैलं च दधितक्रंघृतंपयः ॥

नदुष्येच्छूद्रजातीनां कुर्यात्सर्वेषुविक्रयम् ॥ ७१ ॥

शूद्रों का लवण, मधु, तैल, दही, छाछ, घी, और दूध इनका  
दोष नहीं सब के पास बेच सक्ता है ॥ ७१ ॥

विक्रीणन्मद्यमांसानिह्यभक्ष्यस्यचभक्षणम् ॥

कुर्वन्नगम्यागमनं शूद्रः पतति तक्षणात् ॥ ७२ ॥

मद्य और मांस को बेचने से, अभक्ष्य को भक्षण करने से  
और अगम्या स्त्री का गमन करने से उसी क्षण शूद्र पतित होता है ॥ ७२ ॥

कपिलाक्षीरपानेन ब्राह्मणीगमनेनच ॥

वेदाक्षरविचारेण शूद्रस्यनरकंश्रुयम् ॥ ७३ ॥

इतिपाराशरीय धर्मशास्त्रे चतुर्वैय्याचरो नामत्रयोऽध्यायः ॥ १ ॥

कपिला गौका दूध पीने से ब्राह्मणी का संग करने से, और वेद  
के अक्षरों को विचार करने से शूद्र को नरक अवश्य होता है ॥ ७३ ॥

इति पाराशर धर्मशास्त्रे नागादीकार्याचतुर्वैय्याचारो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥



अतःपरंगृहस्थस्य कर्माचारं कलौयुगे ॥

धर्मसाधारणं शक्त्या चातुर्वर्ण्यात्क्रमागतम् ॥ १ ॥

पहिले अध्याय में विशेष और साधारण धर्म कहे, अब दूसरे अध्याय में ग्रंथकार प्रतिज्ञा करने हैं कि इसके अनन्तर गृहस्थका जो आचरण कलियुग में चारोंवर्णों के क्रमसे ( पूर्व २ कलियुगों में जो चारों वर्णोंका क्रमपूर्वक ) चला आया है ॥ १ ॥

तं प्रवक्ष्याम्यहंपूर्वं पराशरवचो यथा ॥

षट्कर्मसहितो विप्रः कृषिकर्म च कारयेत् ॥ २ ॥

उसे और शक्ति अर्थात् समाध्य के न्यून वा अधिक होने से जो साधारण धर्म होता है उसे भी मैं उसी भांति कहूंगा, कि जैसे पहिले पराशर का वचन है ( प्रथमोऽध्यायमें उक्त ) छठों कर्म सहित ब्राह्मण को खेती भी करानी चाहिये ॥ २ ॥

क्षुधितं तृषितं श्रुतं वलीवर्द्धनयोजयेत् ॥

हीनांगं व्याधितं क्लीवं वृषं विप्रो न वाहयेत् ॥ ३ ॥

भूखे, प्यासे, और थके हुए बैल को जुए में न जोते, जो बैल अंगहीन हो अथवा रोगी हो तथा क्लीव ( बधिया किया ) हो उसे तो हलमें बाधना ही न चाहिये ॥ ३ ॥

स्थिरांगं नीरुजं दृप्तं सुनर्दं षष्ठं वर्जितम् ॥

वाहयेद्विषसस्यार्द्धं पश्चात्स्नानं समाचरेत् ॥ ४ ॥

जिस बैलके अंग दृढ हो, रोग रहित हो दर्पसे भरा हो डकारें मारता हो, बधिया न हो इस भांति के बैल को आधा दिन जोते पीछे स्नान करे ॥ ४ ॥

जप्यं देवार्चनं होमं स्वाध्यायं चैव मभ्यसेत् ॥

एकद्वित्रिचतुर्विप्रान् भोजयेत्स्नातकान् द्विजः ॥ ५ ॥

द्विजों को चाहिये कि जप देवपूजन, होम, और वेदका अध्ययन प्रतिदिन करे एक, दो, तीन, वा चार ब्राह्मण ब्रह्मचारियों को भोजन करावे ॥ ५ ॥



स्वयंकृपेतथाक्षेत्रे धान्यैश्चस्वयमर्जितैः ॥

निर्वपेत्यंचयज्ञांश्च क्रतुदीक्षां चकारयेत् ॥ ६ ॥

अपने जोते खेत में अपने कमाने से, जो अन्न हो उनसे पंच यज्ञ ( बलिबैश्व देव आदिक ) और बड़े यज्ञों को भी करावे ॥ ६ ॥

तिलारसानविक्रेया विक्रेयाधान्यतस्समाः ॥

विप्रस्यैवविधावृत्ति स्तृणकाष्टादिविक्रयः ॥ ७ ॥

तिल और रस ( घी तेल आदि ) कभी न बेचे यदि बेचे तो अन्न से बदलाकरले ब्राह्मण की वृत्ति ऐसी होती है, तृण और काष्ठ आदिकोंका विक्रय करलेवे ॥ ७ ॥

ब्राह्मणश्चेत्कृषि कुर्यात्तत्सहादेषमवाप्नुयात् ॥

अष्टागवंधर्महलं षड्विंशत्तिलक्षणम् ॥ ८ ॥

ब्राह्मण खेति करे, तो उसको षड्वा दोष लगता है, आठ बैलका हल धर्म हल होता है और छ बैलों से वृत्तिके अर्थ ॥ ८ ॥

चतुर्गवन्तृशंसानां द्विगवंगोजिघांसुवत् ॥

द्विगवन्वाहयेत्पादं स्रग्धानहेतुचतुर्गवम् ॥ ९ ॥

चार बैलों से निर्दधी लोगोंका और दो बैलों से गौकी हत्या करने हारों का सा होता है । दो बैलों का हल पहर भर जोतना चाहिये चार बैलोंका दो पहर तक ॥ ९ ॥

षड्गवन्तुत्रिया माहेष्टभिःपूर्णतुवाहयेत् ॥

नाप्नोतिनरकेष्वेवं वर्त्तमावस्तुवैद्विजः ॥ १० ॥

छ बैलों का तीन पहर तक और आठ बैलों से पूरे दिनभर जोते । इस भांति जो द्विज वर्त्तावे कर्ता है वह नरक में नहीं जाता ॥ १० ॥

दानंदद्याच्चवैतेषां प्रशस्तस्वर्गसाधनम् ॥

संवत्सरेणयत्पापं मत्स्यघातीसमाप्नुयात् ॥ ११ ॥

दान भी देवे तो उन कर्षकों का यह अत्युत्तम स्वर्गसाधन होता



है । जो पाप मछली मारने वाले को बरस भर में होता है ॥ ११ ॥

अयोमुखेनकाष्ठेन तदेकाहेनलांगली ॥

पाशकोमत्स्यंघाती च व्याधःशाकुनिकस्तथा ॥ १२ ॥

उतना लोहे जड़े हुए काठ हल से एकही दिन में हल जोतने वाले को होता है । फांसी देने हारा, मछली मारने वाला, व्याधा, ( शिकारी ) चिड़ीमार ॥ १२ ॥

अदाताकर्षकश्चैव पंचैतेसमभागिनः ॥

कंडनीपेषणीचुल्ली उदकुंभीचमार्जनी ॥ १३ ॥

और जो अदाता खेतिहर हैं यह पांचों तुल्य पाप भागी होते हैं ओषली, चक्की, चुल्ली, पानीका धडा, मार्जनी ( झाड़ू ) ॥ १३ ॥

पंचसूनागृहस्थस्य अहन्यहनिवर्तते ॥

वैश्वदेवौवलिभिन्ना गोश्रासोहतकारकः ॥ १४ ॥

ये पांचों हत्याके स्थान गृहस्थको प्रतिदिन होते हैं । वैश्वदेव बलि, भिन्ना, गोश्रास, और हुंतकार ॥ १४ ॥

गृहस्थःप्रत्यहंकुर्यात्सूनादोषैर्नलिप्यते ॥

वृत्तंच्छित्त्वामहीभित्वा हत्वाचकृभिकीटकान् ॥ १५ ॥

प्रतिदिन गृहस्थ करे, ते उसे पूर्वोक्त हत्याके दोष नहीं लगते वृक्षको काट पृथिवी को फाड़ और कृमि कीटों को मार कर ॥ १५ ॥

कर्षकःखल्यज्ञेन सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

योनदद्याद्विजातिभ्यो राशिमूलमुपागतः ॥ १६ ॥

खेतिहारखल यज्ञके द्वारा सब पापों से छूटजाता है । अन्नकी राशी पर आये हुये विजोको नहीं देता ॥ १६ ॥

सचौरःसचपापिष्टो ब्रह्मघ्नंतंविनिर्दिशेत् ॥

राज्ञेदत्वातुषड्भागं देवानांचैकविंशकम् ॥ १७ ॥



वह पापी, चोर, और ब्रह्मघाती कहाता है । राजाको छठा भाग और देवतों को इक्कीसवां ॥ १७ ॥

विप्राणां त्रिंशकं भागं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

क्षत्रियोऽपि कृषिकृत्वा देवान् विप्रांश्च पूजयेत् ॥ १८ ॥

और ब्राह्मणों को तीसवां भाग देकर सब पापों से मुक्त होता है । क्षत्री भी खेती करके देवता और ब्राह्मणों की पूजा करे ॥ १८ ॥

वैश्यः शूद्रस्तथा कुर्यात् कृषिवाणिज्यशिल्पकम् ॥

विकर्म कुर्वते शूद्राः द्विजशुश्रूषयोऽभिक्षताः ॥ १९ ॥

वैश्य तथा शूद्र भी खेती, वाणिज्य, और शिल्प ( कारीगरी ) करें, जो शूद्र ब्राह्मण की शुश्रूषा ( सेवा ) छोड़देते हैं वे अपने कर्म से विरुद्धकर्म करनेहारे होते हैं ॥ १९ ॥

भवंत्यलयायुषस्ते वै निरयं यांत्यसंशयम् ॥

चतुर्णामपि वर्णानामेष धर्मः सनातनः ॥ २० ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे गृहस्थधर्माचारो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २॥

वे थोड़े दिन जीते हैं और निश्चय कर्क नरक में जाते हैं । यह धर्म चारों वर्णों का सनातन से चला आता है ॥ २० ॥

इति० द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अतः शुद्धिप्रवक्ष्यामि जनने मरणे तथा ॥

दिनत्रयेण शुद्ध्यति ब्राह्मणः प्रेतसूतके ॥ १ ॥

अब जन्म और मरण में जितने दिनों कर्क शुद्धि होती है सो कहूंगा मरणाशौच में ब्राह्मण लोग तीन दिनमें शुद्ध होते हैं ( समानोदकों के मरण में यह शुद्धि जाननी ) ॥ १ ॥

क्षत्रियोद्वादशाहेन वैश्यः पंचदशाहकैः ॥

शूद्रः शुद्ध्यति मासेन पराशरवचो यथा ॥ २ ॥

क्षत्री बारह दिनमें वैश्य पन्द्रह दिनमें और शूद्र महीने भरमें शुद्ध पराशर के वचनानुसार होता है ( सपिण्डों के मरणमें यह शुद्धि जानना ) ॥ २ ॥



उपासनेतुविप्राणामंगशुद्धिरचजायते ॥

ब्राह्मणानांप्रसूतौतुदेहरूपशौविधीयते ॥ ३ ॥

अग्निहोत्र आदि कर्मों की उपासना के लिये तो उतने समय तक ब्राह्मणोंका अंग शुद्ध हो जाता है ( आशौचमें भी अग्नि होत्रादि करसक्ते हैं ) और प्रसूति अर्थात् जनना शौच में ब्राह्मणों का शरीर स्पर्श करने में कुछ दोष नहीं ॥ ३ ॥

जतौविप्रोदशाहेनद्वादशाहेनभूमिपः ॥

वैश्यः पंचदशाहेनशूद्रोमासेनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥

पुत्र आदि के जन्म होने में ब्राह्मण दस दिनों में, क्षत्रिय १२ दिनों में, वैश्य १५ दिनों में और शूद्र एक महीना में शुद्ध होता है ॥ ४ ॥

एकाहाच्छुद्ध्यतोविप्रोयोग्निवेदसमन्वितः ॥

त्र्यहात्केवलवेदस्तुद्विहा नोदशभिर्दिनैः ॥ ५ ॥

जो ब्राह्मण अग्निहोत्र कर्त्ता हो और वहभी पढ़ाहो वह एकही दिन में शुद्ध होता है । केवल वेदही पढ़े हो तो तीन दिनों में और जो दोनों से रहित हो वह दस दिनों में शुद्ध होता है ॥ ५ ॥

जन्मकर्मपरिभ्रष्टः संध्योपासनवर्जितः ॥

नामधारकविप्रस्तु दशाहंसूतकीर्भवेत् ॥ ६ ॥

जो ब्राह्मण जन्म प्रभृति अपने कर्मों से परिभ्रष्ट हो संध्योपासन भी न कर्त्ताहो और नाम मात्रका ही ब्राह्मण कहलाताहो उसे दस दिन अशौच लगता है ॥ ६ ॥

अजागावोमहिष्यश्य ब्राह्मणीनवसूतका ॥

दशरात्रेण शुद्ध्येत भूमिस्थंचनवोदकम् ॥ ७ ॥

बकरी, गौ, भैंस, और ब्राह्मणों ये सब नवप्रसूता हों तो दस दिनों में शुद्ध होते हैं तथा नया पानी बरसा हो और भूमिपर पड़ाहो वह भी दस दिनों में शुद्ध होता है ॥ ७ ॥



एकपिंडास्तुदायादाः पृथग्दारनिकेतनाः ॥

जन्मन्यपिविपत्तौ च तेषां तत्सूतकं भवेत् ॥ ८ ॥

जो सपिंड है ( एकही पुरुषसे उत्पन्न है ) परन्तु भिन्न जाती की स्त्री से जन्म हुये हैं वेदावाद कहलाते हैं उन्हें भी जन्म और मरणमें अपने पिताकासा आशौच होता है ॥ ८ ॥

तावत्तत्सूतकंगोत्रे चतुर्थपुरुषेण तु ॥

दायाद्विच्छेदमाप्नोति पंचमो वात्मवंशजः ॥ ९ ॥

इन दायादों की सपिण्डता तीन पुरुष तक रहती है और उतनेही तक यह गोत्र का आशौच भी उन्हे रहता है चौथे पुरुष में उनकी दायादला छूटजाती है अर्थात् आदि पुरुष से पांचवां दायाद नहीं रहता है ॥ ९ ॥

चतुर्थे दशरात्रं स्यात्षण्णिशाः पुंसि पंचमे ॥

षष्ठे चतुरहाच्छुद्धिः सप्तमे तु दिनत्रयात् ॥ १० ॥

चौथे तक दस दिन का आशौच पांचवें में छः दिन, छठे में चार दिन और सातवें में तीन दिन का आशौच होता है ॥ १० ॥

भृग्वग्निमरणे चैव देशांतरमृते तथा ॥

वालेप्रेते च सन्यस्ते सद्यः शौचविधीयते ॥ ११ ॥

पहाड से गिरकर, अग्नि से जलकर, परदेस में, जन्म काल ही में, और संन्यास लेकर जिसका मरण होवै उसका आशौच उसी क्षण स्नान करने से निवृत्त हो जाता है ॥ ११ ॥

देशांतरमृतः कश्चित्सगोत्रः श्रूयते यदि ॥

न त्रिरात्रमहोरात्रं सद्यः स्नात्वा शुचिर्भवेत् ॥ १२ ॥

यदि कोई देशांतर में अपना सपिंड मरजावै और वर्षदिन के अनन्तर सुनै तो उसका त्रिरात्र आदि नहीं लगता स्नान करके उसीक्षण शुद्ध हो जाता है ॥ १२ ॥



देशांतरगतोविप्रः प्रवासात्कालकरितात् ॥

देहनाशमनु प्राप्तस्तिथिर्नज्ञायतेयदि ॥ १३ ॥

कोई ब्राह्मण परदेश में कालको प्राप्त हो गया और उसके मरण की तिथि न ज्ञात हो तो ॥१३॥

कृष्णाष्टमीत्वमावस्या कृष्णाचैकादशीचया ॥

उदकंपिण्डदानंचतत्र श्राद्धं च कारयेत् ॥ १४ ॥

कृष्णपक्ष की अष्टमी अमावस और एकादशी को उसका पिण्डोदक दान करना तथा श्राद्ध भी करना चाहिये ॥ १४ ॥

अजातदन्तायेवाला ये च गर्भाद्विनिःसृताः ॥

नतेषामग्नि संस्कारो न शौचं नोदकक्रिया ॥ १५ ॥

जिन बालकों को दांत जमा न हो और जो गर्भ से निकलेही हों उनके मरण पर अग्निदाह, आशौच और जलदानादिक नहीं होते १५

यदिगर्भोविपद्येतसूवनेवापियोषितः ॥

यावन्मासस्थितोगर्भो दिनंतावत्तुरूपकम् ॥ १६ ॥

यदि किसी स्त्रीका गर्भपतन हो अथवा गर्भस्त्राव हो तो जितने महीने का वह गर्भ हो उतनेही दिन उसका सूतक जानना १६

आचतुर्थाद्भवेत्स्त्रावः पातः पंचमषष्ठयोः ॥

अत ऊर्ध्वप्रसूतिः स्याद्दशाहंसूतकंभवेत् ॥ १७ ॥

चार महीने तक गर्भ गिरे तो उसे स्त्राव कहते हैं पांचवें वा छठे मासमें गिरे तो उसे पात बोलते हैं इसके उपरान्त गिरे तो वह प्रसव ही गिना जाता है उसका सूतक दस दिनों तक होता है ॥ १७ ॥

दंतजातेनुजातेचकृतचूडेचसंस्थिते ॥

अग्निं संस्कारणे तेषां त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ १८ ॥

दांत जमा हो वा न जमा हो और उसके मरण पर यदि उसे अग्निदाह करें तो सपिंडों को तीनदिनों का आशौच होता है इसी



भांती चौल अर्थात् मुंडन होने पर जो बालक मरे उसका भी तीन दिन आशौच होता है ॥ १८ ॥

आदंतजन्मनः सद्य आचूडान्नैशिकीस्मृताः ॥

त्रिरात्रमाव्रता देशाद्विशरात्र मतः परम् ॥ १९ ॥

दांत जन्मने तक उसी छन उससे उपरांत चौल होने तक एक दिन चौल होने पर व्रतबंध होनेताई तीनदिन और व्रतबंध होने पर दसदिन का आशौच होता है ॥ १९ ॥

ब्रह्मचारी गृहे येषां हूयते च हुताशने ॥

सम्पर्कचेन्नकुर्वन्ति न तेषां सूतकं भवेत् ॥ २० ॥

ब्रह्मचारी को और जिसके ग्रह में अग्निहोत्र होता हो उन्हें जन्म और मरणका आशौच नहीं लगता यदि आशौच वालों से खाने पीने बैठने का संसर्ग न रखे तो ॥ २० ॥

संपर्काद्दुष्यते विप्रो जनने मरणे तथा ॥

संपर्काच्च निवृत्तस्य न प्रेतं नैव सूतकम् ॥ २१ ॥

जन्म अथवा मरण में ब्राह्मण संपर्कही से दोष भागी होता है यदि संपर्क न करे तो उसे सूतक वा प्रेताशौच नहीं लगता है ॥ २१ ॥

शिल्पिनः का रुकावैद्या दासी दासाश्च नापिताः ॥

राजानः श्रोत्रियाश्चैव सद्यः शौचाः प्रकीर्तिताः ॥ २२ ॥

शिल्पी ( चितेरा आदि ) कारुक ( रसोदयाप्रभृति ) वैद, दासी, दास, नाई, राजा, शौर श्रोत्रिय ( वेद पाठी ) इन सबों का आशौच शुद्धि उसी छन हो जाता है ॥ २२ ॥

सव्रतो मंत्र पूतश्च आहितग्निश्च यो द्विजः ॥

राज्ञश्च सूतकं नास्ति यस्य चेच्छति पार्थिवः ॥ २३ ॥

किसी व्रतको करनेवाला, सव्र अर्थात् यज्ञ से पवित्र हुआ और अग्निहोत्र करनेहारा जो द्विज हो उसे और राजाओं को सूतक नहीं होता तथा जिसे राजा चाहै उसे भी सूतक नहीं होता है ॥ २३ ॥



उद्यतोनिधनेदानं आर्तोविप्रोनिमंत्रितः ॥

तथैव ऋषिभिर्दृष्टं यथाकालेन शुद्ध्यति ॥ २४ ॥

मरने पर उद्यत हुआ, और दान करने में उद्यत, जो आर्त (व्याधि आदिसे पीड़ित) हो, और नवता हुआ ब्राह्मण इन्हें भी ऋषियों ने कहा है कि उस अपने अपने कार्य समय में शुद्ध हो जाते हैं ॥ २४ ॥

प्रसवे गृहमेधीतु न कुर्यात्संकरं यदि ॥

दशाहाच्छुध्यते माता त्ववगाह्यपिता शुचिः ॥ २५ ॥

यदि गृहस्थ पुत्रादि के जन्म होने से प्रसूती का स्पर्श न करे तो पिता उसी क्षण स्नान करके शुद्ध हो जाता है और माता दस दिनों में शुद्ध होती है ॥ २५ ॥

सर्वेषां श्रावमाशौचं मातापित्रोस्तु सूतकम् ॥

सूतकं मातुरेव स्यादुपस्पृश्य पिता शुचिः ॥ २६ ॥

मरण में तो जितने उसके सपिंड हैं उन सबों को छूना न चाहिये और जन्म होने में केवल पिता और माता ही को न स्पर्श करना तिसमें भी पिता तो स्नान आचमन करने के अनन्तर स्पर्श योग्य हो जाता है परन्तु माता दस दिन तक बराबर अशुद्ध रहती है ॥ २६ ॥

यदि पत्न्यां प्रसूतायां संपर्कं कुरुते द्विजः ॥

सूतकं तु भवेत्तस्य यदि विप्रः षडंगवित् ॥ २७ ॥

स्त्री को प्रसव हो और ब्राह्मण उसको स्पर्श आदि कर ले तो चाहे वह वेद के षडंग (शिक्षा, कला, व्याकरण, निरुक्त ज्योतिष, छन्द) भी जानता हो तब भी दस दिन बराबर अशुद्ध रहेगा छूने योग्य न होगा ॥ २७ ॥

संपर्कज्जायते दोषो नान्यो दोषोस्ति वै द्विजे ॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन संपर्कं वर्जयेद्बुधः ॥ २८ ॥

संपर्क से द्विज को दोष होता है और दोष उसको नहीं है इस



हेतु बुद्धिमान् को चाहिये सर्वथा उस संपर्क से बचा रहे ॥ २८ ॥

विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वंतरामृतसूतके ॥

पूर्वसंकल्पितद्रव्यं दीयमानं न दुष्यति ॥ २९ ॥

विवाह, उत्सव, ( व्रतबंधादि ) और यज्ञ इनके मध्य यदि जन्म वा मरण हो जाय तो पहिले संकल्प किये हुये द्रव्योंको देने में दोष नहीं होता ॥ २९ ॥

अंतरातु दशाहस्य पुनर्मरणजन्मनी ॥

तावत्स्यादशुचिर्विप्रो यावत्तत्स्थादनिर्दशम् ॥ ३० ॥

यदि एक आशौच पड़ा हो और दस दिन के भीतर ही दूसरा जन्म अथवा मरण पुनः हो जावे तो पहिले आशौच में दस दिनों में ही उस दूसरे की भी शुद्धि हो जाती है कोई कोई इस वचन का अर्थ यों करते हैं कि जबतक बचिमें आपड़े हुए दूसरे आशौच के दस दिन पूरे न होलें तबतक बराबर ब्राह्मण को अशुचि रहती है ॥ ३० ॥

ब्राह्मणार्थाविपन्नानां वंदिगो ग्रहणे तथा ॥

आहवेषु विषन्नाना मेकरात्रं स शौचकम् ॥ ३१ ॥

जिनका मरण ब्राह्मण की रक्षा के निमित्त बंदी ( कैदी ) के छोड़ा ने और गौ के छुड़ाने में हुआ हो तथा संग्राममें जो मरे हों उनका एक दिन रात अशौच होता है ॥ ३१ ॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमंडलभेदिनौ ॥

परिब्राट् योगयुक्तश्च रणे चाभिमुखो हतः ॥ ३२ ॥

ये दोनो पुरुष सूर्य का मंडल घेध कर स्वर्ग में जाते हैं एक योग करने हारा संन्यासी और दूसरा जो रण में सन्मुख हो कर मरे ॥ ३२ ॥

यत्र यत्र हतः शूरः शत्रुभिः परिवेष्टितः ॥

अक्षयां ललभते लोकान् यदि क्लीबं न भाषते ॥ ३३ ॥

शूर मनुष्य चाहे जहां कहीं भी शत्रुओं के घेरा में पड़कर मारा जावे तो उससे अक्षय लोक मिलते हैं पर तु यदि कातर बचन न बोला हो ॥ ३३ ॥



संन्यस्तंब्राह्मणंदृष्ट्वास्थानाच्चलतिभास्करः ॥

एषमेमंडलंभित्वा परंस्थानं प्रयास्यति ॥ ३४ ॥

संन्यासी हुए ब्राह्मण को देख सूर्य कांप उठने हैं कि यह मेरा मण्डल बंध कर ब्रह्मलोक में जावेगा ॥ ३४ ॥

यस्तुभग्नेषुसैन्येषु विद्रवत्सु समंततः ॥

परित्रातायदागच्छेत्सचक्रतुफलंलभेत् ॥ ३५ ॥

सेनाओं के इधर उधर भागने पर उनकी रक्षा के लिये जो शूर सन्मुख होता है उसे यश करने का फल होता है ॥ ३५ ॥

यस्यच्छेदक्षतंगानां शरमुद्गरयष्टिभिः ॥

देवकन्यास्तुतंवीरं हरंतिरमयंतिच ॥ ३६ ॥

जिस वीर पुरुष के शरीर में बाण मुद्गर और लाठियों की चोट से घाव हो जाता है उसे देवताओं की कन्याएं ले जाकर विहार करती हैं ॥ ३६ ॥

देवांगनासहस्राणि शूरमायोधनेहतम् ॥

त्वरमाणाः प्रधावन्ति ममभर्ताममेतिच ॥ ३७ ॥

हजारों देवांगनाएं रण में मारे हुए शूर के निकट यों कहती हुई दौड़ कर आती हैं कि यह मेरा भर्ता है यह मेरा धर्ता है ॥ ३७ ॥

यंयज्ञसैधं स्तपसाचविप्राः स्वर्गोपिणोवात्रयथैवयांति ॥

क्षणेनयांत्येवहितत्रवीराः प्राणन्सुयुद्धेनपी तजंनः ३८

जिस स्वर्ग में भैरवों यश और नाम्या से शीघ्र ही जिस भांति जाते हैं उसी भांति अच्छे युद्ध में प्राणदेकर वीरलोक भी वहां पर एकही क्षण में जाते हैं ॥ ३८ ॥

जितेनलभ्यतेलक्ष्मीर्मृतेनापिसुरांगनाः ॥

क्षणाध्वंसिनिकायेस्मिन्काचित्तरणेरणे ॥ ३९ ॥

जीत हो तो संपदा मिले और मरण से देवांगना मिलें तो ऐसे रण में इस क्षण भंगी काया की कौन सी चिन्ता है ॥ ३९ ॥



ललाटदेशे रुधि रंसूवच्चयस्याहवेतुप्रविशेच्चवक्त्रम् ॥  
तत्सोमपनोनाकेलास्यतुल्यसंग्रामयज्ञेविधिवच्चदृष्टम् ४०

युद्धमें जिसके मस्तकसे रुधिर गिर कर सिर में पड़ता है तो वह उसके विधिवत् यज्ञ में सोमयान करने के तुल्य होता है ॥ ४० ॥

अनाथं ब्राह्मणं प्रेतं ये वहन्ति द्विजातयः ॥

पदे पदे यज्ञफलमाप्नुष्वर्याल्लभन्ति ते ॥ ४१ ॥

जो द्विजातिलोग किसी अनाथ मरे हुए ब्राह्मणों को दाह करने के लिये उठा ले जाते हैं तो वे जितने पांव चलते हैं उन हर एक में उन्हें यज्ञका फल होता जाता है ॥ ४१ ॥

न ते मामशुभं किंचित्पापं वा शुभकर्मणां ॥

जलावगाहनात्तेषां सद्यः शौचं विधीयते ॥ ४२ ॥

उन भले काम करनेहारोंको कोई अशुभ और पाप नहीं होता तथा जल में स्नान करने से उनकी शुद्धि भी वही दिन हो जाती है ॥ ४२ ॥

असगोत्रमबंधुंच प्रेतीभूतं द्विजोत्तमं ॥

वाहित्वा च दहित्वा स प्राणायामेन शुद्ध्यति ॥ ४३ ॥

जो ब्राह्मण अपना सगोत्र और बंधु न हो उसे ले जाने और दाह करने से तो एक प्राणायाम करने से शुद्धि होती है ॥ ४३ ॥

अनुगम्येच्छया प्रेतं ज्ञातिमज्ञातिमेव वा ॥

स्नात्वा स चैलं रपुण्ड्रवाग्निघृतं प्राश्य विशुद्ध्यति ॥ ४४ ॥

अपनी इच्छा से यदि किसी जाति अधवा परजाति के मृत के पीछे जावे तो वह सब से स्नान करके अग्नि का स्पर्श करे और उस दिन घी खाकर रहे तब शुद्ध होता ॥ ४४ ॥

क्षत्रियं मृतमज्ञानाद्ब्राह्मणोऽनुगच्छति ॥

एकाहमशुचिभूत्वा पंचगव्येन शुद्ध्यति ॥ ४५ ॥



जो ब्राह्मण अज्ञान से किसी मरे हुए क्षत्रिय के पीछे जाता है वह एक दिन रात अशुद्ध रहता है और दूसरे दिन पंचगव्य स्नान से शुद्ध होता है ॥ ४३ ॥

शवंचवैश्यमज्ञानाद्ब्राह्मणो ह्यनुगच्छति ॥

कृत्वाशौचं द्विरात्रं च प्राणायामान् षड्वाचरेत् ॥ ४४ ॥

मरे हुए वैश्य के पीछे यदि अज्ञान से ब्राह्मण जावे तो दो दिन आशौच करके छः प्राणायाम करे तब शुद्ध होता है ॥ ४४ ॥

प्रेतीभूतं तु यः शूद्रं ब्राह्मणो ज्ञानदुर्बलः ॥

अनुगच्छेन्नीयमानं त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ ४५ ॥

जो अज्ञानी ब्राह्मण मरे हुए शूद्रके पीछे जाता है वह तीन दिन अशुचि रहता है ॥ ४५ ॥

त्रिरात्रे तु ततः पूर्णेन दींगत्वासमुद्रगाम् ॥

प्राणायामशतं कृत्वा घृतं प्राश्य विशुद्ध्यति ॥ ४६ ॥

तीन दिन बीतने पर किसी समुद्र गामिनी नदी में जाकर सौ प्राणायाम करे और घी भोजन करे तो शुद्ध होता है ॥ ४६ ॥

विनिवर्त्य यदा शूद्राः उदकांतमुपस्थिताः ॥

द्विजैस्तदानुगंतव्या एष धर्मः सनातनः ॥ ४७ ॥

जब शूद्र लोग दाह करके किसी जलाशय के निकट खड़े हों तब उनके पास ब्राह्मण प्रभृति जावें यह सनातन धर्म है ॥ ४७ ॥

तस्माद्द्विजो मृतं शूद्रं न स्पृशेन्न च दाहयेत् ॥

दृष्टे सूर्यावलोकनेन शुद्धिरेषा पुरातनी ॥ ४८ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे जननभरणसूतकादि

शुद्धिर्नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥





इस लिये द्विज लोग मरे हुए शूद्रको न बूवें और न जलावें और देखलें तो भी सूर्य की और ताकने से शुद्ध होते हैं यही रीति पुरातन है ॥ ५० ॥

इति श्रीवृत्तीयो ध्यायः ॥ ३ ॥

अतिमानादतिक्रोधात्स्नेहाद्विवाभयात् ॥

उद्वहनीयात्स्त्रीपुमान्वा गतिरेषाविधीयते ॥ १ ॥

यदि कोई पुरुष अथवा स्त्री अपने मानकी हानि से, अत्यन्त क्रोध से बड़े प्रेम से, और अति भयसे आत्मवध करे (मरजावे) तो उसकी गति यह होती है ॥ १ ॥

पूयशोणितसंपूर्णे त्वंधेतमसिमज्जति ॥

षष्ठिवर्षसहस्राणि नरकंप्रतिपद्यते ॥ २ ॥

कि पीव और रक्त से भरे हुए अन्धतामसनामी नरक में साठ हजार बरस तक पड़ा रहता है ॥ २ ॥

नाशौचंनोदकंनाग्निं नाश्रुपातंचकारयेत् ॥

बोढारोग्निप्रदातारः पाशच्छेदकरास्तथा ॥ ३ ॥

उक्त प्रकार से मरने हारे का आशौच, उदकदान, और दाह कर्म, न करे तथा उसके अर्थ रोदन भी न करे उनके लेजाने, दाह करने, और बन्धन काटने हारों की ॥ ३ ॥

ततकृच्छ्रणशुद्ध्यंती त्येवमाहप्रजापतिः ॥

गोभिर्हतंतथोद्वहं ब्राह्मणेन तु घातितम् ॥ ४ ॥

शुद्धि तप्तकृच्छ्रव्रत से होती है ऐसा प्रजापति कहते हैं। गौओं से मारा हुआ, अपने से मेरा हुआ, (जैसा पहिले कह आए हैं अति क्रोधादि से) और ब्राह्मणों करके मारा हुआ जो हो ॥ ४ ॥

सैस्पृशतितुयेविप्राबोढारश्चाग्निदाश्चये ॥

अन्येयेचानुगंतारः पाशच्छेदकराश्चये ॥ ५ ॥



उसे जो कोई ब्राह्मण छूवे, उठाकर ले जावे, दाह करे, और उसकी रथी के पीछे चलै अथवा गलेका बंधन काटे तो ॥ ५ ॥

तप्तकृच्छ्रेण शुद्धास्ते कुर्युर्ब्राह्मणभोजनम् ॥

अनडुत्सहितांगांच दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ॥ ६ ॥

वे तप्तकृच्छ्र व्रत करके शुद्ध होकर ब्राह्मण भोजन करावें और वृषभ सहित गौ ब्राह्मण को दक्षिणा देवें ॥ ६ ॥

त्र्यहमुष्णं पिवेद्धारित्र्यहमुष्णं पयः पिवेत् ॥

त्र्यहमुष्णं पिवेत्सर्पिर्वायुमक्षौ दिनत्रयम् ॥ ७ ॥

तप्तकृच्छ्रव्रत यों होता है कि पहिले तीन दिन उष्णजल पीकर रहे उसके अनन्तर तीन दिन उष्ण दूध पीवे, पुनः तीन दिन तप्त घी पीवे उसके पीछे तीन दिन कुछ न खावे ऐसे चारह दिन में यह व्रत होता है ॥ ७ ॥

षट्पलंतुपिवेदंभः त्रिपलंतुपयः पिवेत् ॥

पलमेकं पिवेत्सर्पिस्तप्तकृच्छ्रं विधीयते ॥ ८ ॥

( ऊपर जो उष्ण आदि पीने की कहा है उसका तोल यह है ) कि २४ तोले जल पीना, १२ तोले दूध और ४ तोले घी पीना तब तप्त कृच्छ्र होता है ॥ ८ ॥

यैवैसमाचरद्विप्रः पतितादिष्वकामतः ॥

पंचाहंवादशाहंवाद्वादशाहमथापि वा ॥ ९ ॥

जो ब्राह्मण पतितादिकों के साथ अनिच्छा पूर्वक ५।१० अथवा १२ दिनों तक रहे ॥ ९ ॥

मासार्द्धमातमेकं वा मासद्वयमथापि वा ॥

अब्दार्द्धमब्दमेकं वा भवेदूर्ध्वहितस्समः ॥ १० ॥

वा ३५ दिनों तक अथवा १।२। वा ६ मास तक रहे वा एक वर्ष तक रहे तो वक्ष्यमाण प्रायश्चित्त करे यदि वर्ष दिन से अधिक साथ रहे तो उन्हीं के तुल्य हो जाता है ॥ १० ॥



त्रिरात्रं प्रथमे पक्षे द्वितीये कृच्छ्रमाचरेत् ॥

तृतीये चैव पक्षे तु कृच्छ्रं सांतपनं भवेत् ॥ ११ ॥

इन आठों प्रकार के संसर्गका प्रायश्चित्त कमसे यो जानना कि त्रिरात्र कृच्छ्र, कृच्छ्रसान्त पन, ॥ ११ ॥

चतुर्थे दशरात्रस्यात्पराकः पंचमेमतः ॥

कुर्याच्चांद्रायणं षष्ठे सप्तमे त्वेदवद्वयम् ॥ १२ ॥

दशरात्र, पराक, चांद्रायण, दो ऐन्दव ॥ १२ ॥

शुद्धयर्थमष्टमे चैव षण्मासान्कृच्छ्रमाचरेत् ।

पक्षसंख्याप्रमाणेन सुवर्णान्यपि दक्षिणा ॥ १३ ॥

और छः महीने तक कृच्छ्रव्रत करना पड़ता है और दक्षिणा भी इन में क्रम से पहिले में एक दूसरे में दो सुवर्ण ( मोहर ) इसी भांति एक सुवर्ण अधिक करके ब्राह्मण को दी जाती है ॥ १३ ॥

ऋतुस्नाता तु यानारी भर्तारि नोपसर्पति ॥

सामृतानरकं याति विधवा च पुनः पुनः ॥ १४ ॥

जो स्त्री ऋतु स्नाता ( रजस्वला स्नान कर चुकी ) हो और अपने पति के पास न जावे तो वह मरने पर नरक में पड़ती और बारम्बार विधवा भी होती है ॥ १४ ॥

ऋतुस्नाता तु यो भार्या सन्निधौ नोपगच्छति ॥

घोरायां भ्रूणहत्यायां युज्यते नान्नसंशयः ॥ १५ ॥

जो पुरुष निकट रहकर भी अपनी ऋतु स्नाता स्त्री के पास नहीं जाता उसे बड़ी भारी गर्भ हत्या होती है इस में कुछ सन्देह ही नहीं ॥ १५ ॥

दरिद्रं व्याधितं धूर्तं भर्तारि नानमन्यते ॥

सा शुनी जायते मृत्वासूकरी च पुनः पुनः ॥ १६ ॥

जो स्त्री अपने दरिद्र रोगी अथवा धूर्त पति का भी अपमान करे तो वह मरकर कुशी और सूकरी बारम्बार होती है ॥ १६ ॥



पत्यौजीवतियानारी उपोष्यव्रतमा चरेत् ॥

आयुष्यंहरतेभर्तुः सानारीनखं ब्रजेत् ॥ १७ ॥

पतिके जीते ही जो नारी उपवासकरके व्रत करती है वह अपने पतिकी आयुष्य की हानि करती है ॥ १७ ॥

अपृष्ट्वैवभर्तारं यानारीकुरुतेव्रतम् ॥

सर्वतद्राक्षसान्गच्छेदित्येवंमनुरब्रवीत् ॥ १८ ॥

जो स्त्री अपने पतिके बिना पूछे ही व्रत करती है उसका सब फल राक्षसोंहीको होता है ऐसा मनुने कहा है ॥ १८ ॥

बांधवानांसजातीनांदुर्वृततंकुरुतेतुया ॥

गर्भपातंचयाकुर्यान्नतांसंभाषयेत्क्वचित् ॥ १९ ॥

जो स्त्री अपने कुटुंब और जातिकी बड़ी भारी हानि करे और औषध प्रभृति के द्वारा गर्भ पान करे उससे बोलना कभी न चाहिये ॥ १९ ॥

यत्पापं ब्रह्महत्याया द्विगुणं गर्भपातने ॥

प्रायश्चित्तं न तस्यास्ति तस्यास्त्यागो विधीयते ॥ २० ॥

ब्रह्महत्यासे दूना पाप गर्भ पातन करने में होता है और उसका प्रायश्चित्त अर्थात् शोध भी नहीं होसकता इसहतु ऐसी स्त्रीका त्याग ही करना विहित है ॥ २० ॥

न कार्यमावसथ्येन नग्निहोत्रेण वा पुनः ॥

समवेत् कर्मचांडालो यस्तु धर्मपराङ्मुखः ॥ २१ ॥

जो मनुष्य धर्म से विमुख है उसके आवसथ्य और अग्निहोत्र करने से क्या होता है अर्थात् कुछ सिद्ध नहीं वह कर्मचाण्डाल कहाता है ॥ २१ ॥

ओघवाताहतं बीजं यस्य क्षेत्रे प्ररोहति ॥

स क्षेत्रे लभते बीजं न बीजोक्षागमर्हति ॥ २२ ॥



जल और वायु के वेग से यदि कोई बीज लुढ़क कर कहीं दूसरे के खेत में जा जमे तो उस खेत का स्वामी ही उस बीज को लेता है न कि उस बीज के स्वामी को भी भाग मिलता है ॥ २२ ॥

तद्वत्परस्त्रियाः पुत्रौ द्वौ सुतौ कुण्डगोलकौ ॥

पत्यौ जीवतिकुण्डस्तु मृते भर्तृरिगोलकः ॥ २३ ॥

इसी भाँति पर स्त्री को भी कुण्ड और गोलक दो पुत्र होते हैं भर्ता जीता रहे उस समय उपपति से जो पुत्र उत्पन्न हो उसे कुण्ड और पतिके मरने पर जो उपजे उसे गोलक कहते हैं ॥ २३ ॥

औरसः क्षेत्रजश्चैव दत्तः कृत्रिमकः सुतः ॥

दद्यान्मातापितावायं सपुत्रो दत्तको भवेत् ॥ २४ ॥

औरसे, ( अपनी सजातीय भार्या में उत्पन्न क्षेत्रज, दत्तक, और कृत्रिम इतने प्रकारके पुत्र होते हैं जिस पिता वा माता किसी को दे वही दत्तक पुत्र होता है ॥ २४ ॥

परिवित्तिः परिवत्ता यथा च परिविद्यत ॥

सर्वे ते नरकं यांति दातृयाजकपंचमाः ॥ २५ ॥

परिवित्त, ( जिसके छोटे भाईने पहिले अपना ब्याह कर लिया हो ) परिवेता ( उसी परिवित्तका वह छोटा भाई ) और जिस कन्या को परिवेता ब्याह, तथा उस कन्या का दाता और उसका ब्याह कराने द्वारा ब्राह्मण ये पाँचों नरक में जाते हैं ॥ २५ ॥

द्वौ कृच्छ्रौ परिवित्तेस्तु कन्यायः कृच्छ्र एव च ॥

कृच्छ्राति कृच्छ्रौ दातुस्तु होता चांद्रायणं चरेत् ॥ २६ ॥

परिवित्त को दो कृच्छ्रव्रत करने चाहिये, कन्याको एक कृच्छ्र, दाता को कृच्छ्रव्रत करना होता है और ब्याह कराने द्वारा चांद्रायण करे ॥ २६ ॥

कुब्जबामनषण्डपुगद्दक्षुजडपुच ॥

जात्यंधत्रथिरमूकतदाघः परिविदत् ॥ २७ ॥



जिसका जेठा भाई कुबड़ा, बौना, नपुंसक तोतला अज्ञानी ( जड़ ) जन्मांध वधिर अथवा गूंगा होवे तो उसके छोटे भाई को पहिले व्याह करने से दोष नहीं होता है ॥ २७ ॥

पितृव्यपुत्रःसापत्नपरनारीसुतस्तथा ॥

दाराग्निहोत्रसंयोगेनदोषःपरिवेदने ॥ २८ ॥

चचेरे और सौतीले भाई को तथा दत्तकादि परनारी सुतों को जेठे भाई से पहिलेही व्याह और अग्निहोत्र करने में दोष नहीं है ॥ २८ ॥

ज्येष्ठोभ्रातायदातिष्ठे दाधाननैव कारयेत् ॥

अनुज्ञातस्तुकुर्वीत शंखस्यवचयनंयथा ॥ २९ ॥

यदि जेठा भाई व्याह वा अग्निहोत्र करने की इच्छा न रखता हो और उसकी आज्ञा लेकर छोटा भाई अग्निहोत्र करने की इच्छा न रखता हो और उसकी आज्ञा लेकर छोटा भाई अग्निहोत्र आदि करले तो शंख के वचन हैं कि उसे दोष नहीं ॥ २९ ॥

नष्टमृतेप्रव्रजिते क्लीवेचपतितेपतौ ॥

पंचस्वापत्सुनारीणां पतिरन्योविधीयते ॥ ३० ॥

जिसका पति नष्ट ( अर्थात् जिसका विदेश जाने आदिसे कहीं पताही न लगे ) मृत प्रव्रजित, ( संन्यासी ) नपुंसक और पतित होवे इन पांच प्रकार की विपत्तियों में उस स्त्री को अन्यपति विहित ॥ ३० ॥

मृतेभर्तरियानारीब्रह्मचर्यवृत्तस्थिता ॥

सामृतालभतेस्वर्गं यथातेब्रह्मचारिणः ॥ ३१ ॥

भर्ता के मरने पर जो स्त्री ब्रह्मचर्य वर्त करती हुई अपने दिनों को बिताती है वह मर कर ब्रह्मचारीयों की भांति स्वर्ग में जाती है ॥ ३१ ॥

तिसूः कोट्योर्द्धकोटीच यानिलोमानिमानवे ॥



तात्वकालंब सेत्स्वर्गे भर्त्तार्यानुगच्छति ॥ ३२ ॥

जो स्त्री अपने पति के मरने पर उसी के साथ प्राण त्याग करती है वह साठे तीन करोड़ अर्थात् जितने रोंगटे देह में है उतने बरस स्वर्ग में वास करती है ॥ ३२ ॥

व्यालग्राहीयथाव्यालं बलादुद्धरतेविलात् ॥

एवंस्त्रीपतिमुद्धृत्य तेनैवसहमोदते ॥ ३३ ॥

इतिपाराशरीयेधर्मशास्त्रे उदुबन्धनादिमृतशुद्धिर्नामचतुर्थोऽध्यायः ॥

जिस प्रकार सर्प पकड़ने हारे बिल के अन्दर से भी अपने करतब के बलसे सर्प बाहर खींच ही लेते हैं उसी भांति नीच स्थल में भी पड़े हुए अपने पतिको सती स्त्री बाहर निकाल लेती और उसी के साथ विहरती है ॥ ३३ ॥

॥ इति चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

वृकश्चानशृगालादि दष्टोयस्तुद्विजोत्तमः ॥

स्नात्वाजपेत्सगायत्रीं पवित्रांवेदमातरम् ॥ १ ॥

जिस ब्राह्मणको वृक ( चींग अथवा चघ्याड़ ) कुत्ता और शृगाल ( गीदड़ ) प्रभृतिने काट खाया होतो वह स्नान करके वेदकी माता गायत्री का जप करे ॥ १ ॥

गवांशृंगोदकस्नाना न्महानद्योस्तुसंगमे ॥

समुद्रदर्शनाद्वापिशुनादष्टः शुचिर्भवेत् ॥ २ ॥

अथवा कुत्तेका काटा हुआ गौ के शृंगके जल से वा दो महानदों के संगम में स्नान करे किंवा समुद्रका दर्शन करे तो भी शुद्ध हो जाता है ॥ २ ॥

वेदविद्याव्रतस्नातः शुनादष्टोद्विजोयदि ॥

सहिरण्योदकैः स्नात्वाघृतप्राश्यविशुद्ध्यति ॥ ३ ॥

यदि किसी ऐसे ब्राह्मणको कुत्ता काटे कि जो वेद और चौदहों विद्याओंको जानता हो तथा अच्छे २ व्रत किएहों तो वह सोना



धोकर उस पानी से नहाले और धी खाले इतने ही से शुद्ध होता है ॥ ३ ॥

सब्रतस्तुशुनादष्टोयस्त्रिरात्रमुपावसेत् ॥

घृतंकुशोदकंपीत्वाव्रतशेषंसमापयेत् ॥ ४ ॥

जो किसी व्रतको कर रहा हो उस बीच उसे कुत्ता काटलेवे तो वह तीन दिन उपवास करे और धी तथा कुशोंकाजल पीवे अनन्तर उस अपने व्रतको जो शेष रहा हो उसे पूरा करे ॥ ४ ॥

अब्रतसुब्रतोवापिशुनादष्टोभवेद्द्विजः ॥

प्रणिपत्यभवेत्पूतोविप्रैश्चक्षुर्निरीक्षितः ॥ ५ ॥

चाहे व्रत वाला हो अथवा व्रत करने हारा न हो कैसा भी द्विज यदि कुत्तेसे काटा जाकर ब्राह्मणों को दण्डवत् करे और ब्राह्मण लोग उसे आंखभर देखें तो वह शुद्ध हो जाता है ॥ ५ ॥

शुनाघ्राताऽवलीढस्य नखैर्विलिखितस्यच ॥

अद्भिः प्रक्षालनंप्रोक्त मग्निनाचोपचूलनम् ॥ ६ ॥

जो वस्तु कुत्तेने सूँघ, चाट, अथवा नखोंसे खसोट ली हो उसको जल से धोकर आगमें सेक दे तो शुद्ध हो जाती है ॥ ६ ॥

ब्राह्मणीतुशुनादष्टा जंबुकेनवृकेणवा ॥

उदितंग्रहनक्षत्रं दृष्ट्वा सद्यः शुचिर्भवेत् ॥ ७ ॥

जिस ब्राह्मणी को कुत्ते, गीदड़ अथवा बौंगने काट लिया हो तो वह उगे हुए ग्रह अर्थात् चन्द्र वा नक्षत्र अर्थात् तारों का दर्शन करने से नसीबन शुद्ध हो जाती है ॥ ७ ॥

कृष्णपक्षेयदासोप्पोनदृश्येत्कदाचन ॥

यांदिशं व्रजते सोमस्तांदिशंचाऽवलोकयेत् ॥ ८ ॥

कदाचित् कृष्णपक्ष हो और चन्द्रमा न देखपड़े तो जिस दिशा में चन्द्रमा जाते हों उस दिशाको देखलें ॥ ८ ॥

असद्ब्राह्मणकेग्रामेशुनादष्टोद्विजोत्तमः ॥



वृषंप्रदक्षणीकृत्यसद्यः स्नात्वाशुचिर्भवेत् ॥ ९ ॥

किसी ऐसे गांव में जब ब्राह्मणको कुत्ता काटे कि जहां दूसरा ब्राह्मण कोई न हो तो बैल की प्रदक्षिणा करस्नान करडाले स्रष्ट शुद्ध हो जाता है ॥ ९ ॥

चाण्डालेनश्वपाकेन गोभिर्विप्रैर्हतोयदि ॥

आहितारिनर्हतोविप्रो विषेणात्महतोयदि ॥ १० ॥

यदि कोई अग्निहोत्री ब्राह्मण चाण्डाल, ( ब्राह्मणी में से शूद्र जन्म हुआ ) श्वपाक, ( क्षता में उग्रसे उत्पन्न ) गौ, अथवा ब्राह्मण द्वारा मारागया हो किंवा विष खा कर आपही मरगया हो तो ॥ १० ॥

देहेत्तंब्राह्मणांविप्रौ लोकाश्चैवमंत्रवर्जितम् ॥

स्पृष्ट्वावोढ्काचदग्ध्वाच सपिण्डेषुचसर्वदा ॥ ११ ॥

उसे उसके सपिण्डों में से कोई ब्राह्मण लौकिक अग्नि में बिना मंत्र पढ़े हीजलादेवे, स्पर्श, हवन, और दाह करने हारा सपिण्ड ॥ ११ ॥

प्राजापत्यंचरेत्पश्चाद्विप्राणामनुशा सनात् ॥

दग्ध्वास्थानिपुनर्गृह्यक्षरैः प्रक्षालेयद्द्विजः ॥ १२ ॥

ब्राह्मणों को आज्ञा से प्राजपत्य व्रतकरे । दाह करके पुनः वह द्विज उसकी हड्डियां लेकर दूध से धोवे ॥ १२ ॥

स्वेनाग्निनारवमंत्रेण पृथगेतत्पुनर्देहेत् ॥

आहितोऽग्निर्द्विजः कश्चित्प्रवसन्कोलचादितः ॥ १३ ॥

और अपनी अग्नि तथा अपने मंत्र से उन्हें पुनः अन्यत्र जलावो । यदि कोई अग्निहोत्री द्विज परदेश में जाकर काष्ठ यज्ञ से ॥ १३ ॥

देहनाशमनुप्राप्तः तस्याग्निर्वसतेगृहे ॥

प्रेताग्निहोत्रसंस्कारः श्रूयतांमुनिपुंगवाः ॥ १४ ॥

मरजावे और उसकी अग्नि उसके घर में हो तो उस मुर्दे और उसकी अग्निका संस्कार है श्रेष्ठ मुनियों आप सुनें ॥ १४ ॥



कृष्णाजिनंसमास्तीर्य कुशैस्तुपुरुषाकृतिम् ॥

षट्शतानिशतंचैव पलाशानांचवृंततः ॥ १५ ॥

काले मृगका चर्म फैलाकर उसपर कुशोंका पुरुषका सरूप बनाना कुशन मिले तो पलाशके सातसौ पत्तों में से ॥ १५ ॥

चत्वारिंशच्छिरेदद्याच्छतंकंठेतुविन्यसेत् ॥

बाहुभ्यांदशकंदद्या दंगुलीषुदशैवतु ॥ १६ ॥

चालीस पत्ते सिर में देना, सौपत्ते गले में, दोनों बाहों में दस अंगुलीयों में दस ॥ १६ ॥

शतंतुजघनेदद्याद्द्विशतंतूदरेतथा ॥

दद्यादष्टौवृषणयोः पंचमेदूतुविन्यसेत् ॥ १७ ॥

जघनमें सौ, दोसौ पेटमें, दोनों अंडोंमें आठ, लिंगमें पांच ॥ १७ ॥

एकविंशतितूरुभ्यां त्रिशतंजानुजंघयोः ॥

पादांगुलीषुदद्यात्षट् यज्ञपात्रंततो न्यसेत् ॥ १८ ॥

दोनों ऊरुओं में इक्कीस, जानु और जंघाओं में तीनसौ, और पांचकी अंगुलियों में छः पत्ते देवे तब यज्ञके पात्रोंको रखे ॥ १८ ॥

शम्यांशश्ने विनिक्षिप्य अरणींमुष्कयोरपि ॥

जुह्वंचदक्षिणेहस्ते वामेतूपभृतंन्यसेत् ॥ १९ ॥

शम्याको लिंगके ऊपर, अरणी को अंडों के ऊपर, जुह्वको दाहिने हाथ पर, उपभृतका बाएं हाथ पर ॥ १९ ॥

पृष्ठेतूलखलंदद्यात्पृष्ठेचमुशलंन्यसेत् ॥

उरसि क्षिप्यदृषदंतंडुलाज्यतिलान्मुखे ॥ २० ॥

पीठ पर मुसल और उलूल देवे, छाती पर दृषत् देवे, चावल, घी, और तिलोंको मुंह में देवे ॥ २० ॥

श्रोत्रेचप्रोक्षणींदद्या दाज्यस्थालींचचक्षुयोः ॥



कर्णेनेत्रेमुखेघ्राणे हिरण्यशकलंन्यसेत् ॥ २१ ॥

कानों पर प्रोक्षणी पात्र देवे आंखों पर आज्यस्थाली, तथा कान, आंख, मुंह, और नाक में सोनेका टुकड़ा देवे ॥ २१ ॥

अग्निहोत्रोपकरण मशेषंतत्रविन्यसेत् ॥

असौस्वर्गायलोकाय स्वाहेत्येकाहुतिसकृत् ॥ २२ ॥

सारा अग्नि होत्रका उपकरण वहां रखकर ( असौस्वर्गाय-लोकायस्वाहा ) ऐसा कहकर एकहीबार आहुती ॥ २२ ॥

दद्यात्पुत्रोथवाभ्राता ध्यन्योवापिच बांधवः ॥

यथादहनसंस्कार स्तथाकार्यविचक्षणैः ॥ २३ ॥

पुत्र अथवा भ्राता देवे किंचा कोई दूसरा बांधव हो तो वह भी दे अनन्तर जैसा दाहका संस्कार होता है तैसा विज्ञान करें ॥ २३ ॥

ई दृशंतुविधिकुर्यात् ब्रह्मलोकगतिः स्मृता ॥

दहंतियेद्विजा स्तंतुं तेषांतिपरमांगतिम् ॥ २४ ॥

इस प्रकारकी विधि करने से ब्रह्मलोककी गति होती है जो ब्राह्मण उसकी दाह करते हैं वे परमगति को पाते हैं ॥ २४ ॥

अन्यथाकुर्वतेकर्म त्वात्मबुद्ध्याप्रचोदिताः ॥

भवंत्यल्पायुषस्तेवै पतंतिनरकेशुचौ ॥ २५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

जो कोई अपनी बुद्धिकी कल्पना से अन्यथा कर्म करते हैं तो वे अल्पायु होते हैं और अति अपवित्र नरक में पड़ते हैं ॥ २५ ॥

इति श्री पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामिप्राणिहत्यासुनिष्कृतिम् ॥

पराशरेणपूर्वोक्तां सन्वर्थेपिचविस्तृताम् ॥ १ ॥

अब जीवों की हत्या करने पर जिस प्रायश्चित्त से मनुष्य शुद्ध होता है सो मैं जैसा पराशर ने पहिले कह रक्खा है और मनुवा



क्यों मैं भी विस्तार सहित है कहता हूँ ॥ १ ॥

क्रौंचसारसहंसाश्च चक्रवाकंचकुक्कुटम् ॥

जालपादंचशरभं हत्वाऽहोरात्रतःशुचिः ॥ २ ॥

क्रौंच, ( कूज ) सारस हंस, चकई, चकवा, कुक्कुट, ( मुर्गा ) और जालपाद, ( जिनके पाद एक चर्म से जुड़े होते अर्थात् चतक मुर्गावियां इत्यादि ) तथा शरभ को मारे तो एक दिन रात उपवास करने से शुद्ध होता है ॥ २ ॥

बलाकाटिट्टिभौवापि शुकपारावतावपि ॥

अटी नवकघातीचशुद्धयेतेनक्तभोजनात् ॥ ३ ॥

बलाका, टिट्टिम, तोता, पारावत ( पनडूब्बी ) अटीन, और चक को मारे तो रात में भोजन करने से शुद्ध होता है ॥ ३ ॥

वृककाककपोतानां सारीतित्तिरघातकः ॥

अंतर्जलउभेसंध्ये प्राणायामेनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥

वृक ( वीग ) काक, कबूतर, सारी और तित्तिर को मारे तो सांभ संधेरे जल में प्राणायाम करने से शुद्ध होता है ॥ ४ ॥

गृध्रश्येनशशादिनामूलकस्यचघातकः ॥

अपक्वीशादिनंतिष्ठेत् त्रिकालंमारुताशनः ॥ ५ ॥

गिद्ध, बाज, शश, ( खरगोश ) और उल्लूको मारे तो पहिले दिन चिनपक्की बस्तु खाकर रहे दूसरे दिन तीसरे पहर भोजन करे तीसरेदिन कुछभी न खावे तो शुद्ध होता है ॥ ५ ॥

वल्गुनीटिट्टिभानांच कोकिलाखंजरीट ॥

केलाविकारकतपक्षेषुशुद्धयेतेनक्तभोजनात् ॥ ६ ॥

वल्गुनी, टिट्टिभी कोयल; खंजरीट, लाविका, ( बटेर ) और जिनके परलालहों उन्हें मारे तो रातको भोजन करनेसे शुद्ध होता है ॥ ६ ॥

कारंडवचकोराणां पिंशुलाकुरस्यच ॥



भारद्वाजादिकंहत्वा शिवसंपूज्यशुद्ध्यति ॥ ७ ॥

कारंडव, चकोर, पिंगला, कुरर और भारद्वाजादि पक्षियोंको मारे तो शिवकी पूजा करने से शुद्ध होता है ॥ ७ ॥

भेरुंडचाषभासांश्च पारावतकर्पिजलम् ॥

पक्षिणांचैवसर्वेषांमहोरात्रमभोजनम् ॥ ८ ॥

भेरुंड, चाष, ( निलकंठ वा गरुड ) मास पारावत, और कर्पि-जलप्रभृति सबपक्षियों के मारने में एक दिनरात भोजन न करे ॥ ८ ॥

हत्वामूषकमार्जारसर्पाऽजगरडुंडुमान् ॥

कृसरंभोजयेद्विप्रान्लोहदंडंचदक्षिणाम् ॥ ९ ॥

चूहा, चिल्ली, सर्प अजगर और डुंडुम, ( पानी का सर्प ) मारे तो कृसरान्न ( तिल मूंग की खिचड़ी ) ब्राह्मणोंको खिलावे और लोहेका दंड दक्षिणा में देवे ॥ ९ ॥

शिशुमारंतथागोधांहत्वाकूर्मचशल्लुकम् ॥

वृंताकफलमक्षीचाप्यहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ १० ॥

शिशुमार ( ससु ) गोधा ( गोह ) कछुआ, और शल्लुक (साही) को मारे तो एक उपवास करे अथवा वृंताकफल खाकर एक दिन रात रहे इतनेही से शुद्ध होता है ॥ १० ॥

वृकजंबुकऋक्षांश्चतरक्षूणांचघातकः ॥

तिलप्रस्थंद्विजेदद्याद्वायुभक्षोदिनत्रयम् ॥ ११ ॥

वृक जंबुक रौंळ तरक्षु ( तरख ) को मारे तो एक प्रस्थतिल ब्राह्मण कोदे और तीन दिन उपवास करे ॥ ११ ॥

गजस्यचतुरगंस्यमहिषोष्टूनिपातने ॥

प्रायश्चित्तमहोरात्रं त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ १२ ॥

हाथी घोडा भैसा और कंट के मारने से एक दिन रात व्रतकरे और तीनों संध्याओं में ( प्रातः सायं मध्याह्न ) स्नानकरे ॥ १२ ॥



कुरंगवानरसिंहं चित्रं व्याघ्रं च घातयन् ॥

शुद्ध्यते स त्रिरात्रेण विप्राणां तर्पणेन च ॥ १३ ॥

हरिण, वानर, सिंह, चित्ता, और बाघ को मारे तो तीन दिन को व्रत करे और ब्राह्मणों को तुष्ट करके भोजन करावे ॥ १३ ॥

मृगरोहि वराहाणामवेर्वस्तस्य घातकः ॥

अफालकृष्टमश्नीया दहोरात्रमुपोष्य सः ॥ १४ ॥

मृग, रोही, शूकर, भेंड, और बकरे को मारकर एक दिन उपवास दूसरे दिन वह अन्न खावे जो बिना जुती हुई धरती में उपजा हो तब शुद्ध होता है ॥ १४ ॥

एवं चतुष्पदानां च सर्वेषां वनचारिणाम् ॥

अहोरात्रोषितस्तिष्ठे जपन्वै जातवेदसम् ॥ १५ ॥

इसी भांति सम्पूर्ण प्रकार के और जंगली चारपायों के मारने पर एक दिन रात उपवास करे और जात वैदस मन्त्र को जपता रहे ॥ १५ ॥

शिल्पिनं कारुकं शूद्रं स्त्रियं वायस्तु घातयेत् ॥

प्राजापत्यद्वयं कृत्वा वृषैकादश दक्षिणा ॥ १६ ॥

चित्तरे, रसोइये, शूद्र और स्त्री को जो मारे वह दो प्राजापत्य व्रत करे और दसगौ एक बैल दक्षिणा दे तब शुद्ध होवे ॥ १६ ॥

वैश्यवाक्षत्रियं वापि निर्दोषं योऽभिघातयेत् ॥

सोति कृच्छ्रद्वयं कुर्याद् गोविंशदाक्षिणां ददेत् ॥ १७ ॥

जो निर्दोष क्षत्री अथवा वैश्य को मारे वह दो अति कृच्छ्रव्रत करे और दस गौ दक्षिणा दे ॥ १७ ॥

वैश्यं शूद्रं क्रियासक्तं विकर्मस्थं द्विजोत्तमम् ॥

हत्वा चांद्रायणं तस्य त्रिंशद्गार्शचैव दक्षिणा ॥ १८ ॥

यदि यज्ञ आदि क्रिया अथवा जप पूजा में बैठे हुए वैश्य



अथवा शूद्र को मारे किंवा किसी अपने धर्म से च्युत ब्राह्मणको मारे तो चांद्रायण व्रत करके तीस गौ दक्षिणादेवै ॥ १८ ॥

चाण्डालं हतवान् कश्चिद्ब्राह्मणो यदि कंचन ॥

प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रं गोद्वयं दक्षिणां ददेत् ॥ १९ ॥

यदि कोई ब्राह्मण चाण्डालको मारे तो प्राजापत्य कृच्छ्रव्रत करे और दो गौ दक्षिणादे ॥ १९ ॥

क्षत्रियेणापि वैश्येन शूद्रेणैवेतरेण च ॥

चाण्डालस्य वधे प्राप्ते कृच्छ्राद्धेन विशुद्ध्यति ॥ २० ॥

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र अथवा अन्य भी कोई यदि चाण्डाल को मारे तो आधा कृच्छ्र करने से शुद्ध होता है ॥ २० ॥

चौरैः श्वपाको चाण्डालो विप्रेणाभिहतो यदि ॥

अहोरात्रोपितः स्नात्वा पंचगव्येन शुद्ध्यति ॥ २१ ॥

यदि चोरी करने हारे श्वपाक अथवा चाण्डाल को ब्राह्मण मारे तो एक दिन रात उपास करके पंचगव्य खावे ॥ २१ ॥

श्वपाकं चापि चाण्डालं विपूः संभाषते यदि ॥

द्विजसंभाषणं कुर्यात्सावित्रीं च सकृत् जपेत् ॥ २२ ॥

श्वपाक अथवा चाण्डाल से यदि ब्राह्मण बात चीत करे तो ब्राह्मणसे बोलकर एक बार गायत्री जपे तब शुद्ध होता है ॥ २२ ॥

चाण्डालैः सह सुसंतुत्रिरात्रमुपवासयेत् ॥

चाण्डालैकपथंगत्वा गायत्री स्मरणान्छुचिः ॥ २३ ॥

चाण्डालके साथ सोनेहारे को तीन दिन उपास कराना और चाण्डाल के साथ राह में चला हो तो गायत्री स्मरण करने से शुद्ध होता है ॥ २३ ॥

चाण्डालदर्शने सद्य आदित्यमवलोकयेत् ॥

चाण्डालस्पर्शने चैव स चैतन्स्नानमाचरेत् ॥ २४ ॥



चाण्डालको देखे तो झटपट सूर्य की और ताक दे चाण्डाल को छू लेवे तो सचैल ( कपडे समेत ) स्नान कर डाले ॥ २४ ॥

चाण्डालखातवापीषुपीत्वासलिलमग्रजः ॥

अज्ञानाच्चैकंभुक्तेन तत्तहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ २५ ॥

यदि ब्राह्मणने बिना जाने चाण्डाल की खुदाई हुई बापी वा कूप आदिमें से जल पी लिया होतो एक अन्न करे और जान बुझकर नहाया वा पानी पीया होतो एक उपवास से शुद्ध होता है ॥ २५ ॥

चाण्डालभांडसंस्पृष्टंपीत्वाकूपगतंजलम् ॥

गोमूत्रयावकाहारस्त्रिरात्राच्छुद्धिमाप्नुयात् ॥ २६ ॥

यदि चाण्डालने अपना भांडा पानी के लिये किसी कूप में डाला हो और उस कूप के जलको पीये तो तीन दिन तक गोमूत्र में यावक पकाकर खाने से शुद्ध होता है ॥ २६ ॥

चाण्डालघटसंस्थंतुयत्तोयपिवते द्विजः ॥

तत्क्षणात्तत्त्वपतेयस्तु पूजापत्यंसमाचरेत् ॥ २७ ॥

यदि चाण्डाल के भाण्डे का जल कोई पीले और उसी दिन उसे चमन कर दे तो वह प्राजापत्य ब्रत करे ॥ २७ ॥

यदिनक्षिपतेतोयं शरीरेयस्यजीर्यति ॥

प्राजापत्यनंदातश्यं कृच्छ्रंसांतपनंचरेत् ॥ २८ ॥

कदाचित् चमन न किया और वह जल उसके पेटमेंही पचगया तो कृच्छ्र सान्तपनकरे ॥ २८ ॥

चरेत्सांतपनंविप्रः प्राजापत्यमनंतरः ॥

तदर्द्धतुचरेद्वैव्यः पादंशूद्रस्यदापयेत् ॥ २९ ॥

यह सान्तपन ब्राह्मण करे क्षत्रिय होतो प्राजापत्य करे, वैश्य और शूद्र प्राजापत्य का चौथाई व्रत करे ॥ २९ ॥

भांडस्थमंत्यजानांतु जलं दधिपयः पिबेत् ॥



ब्राह्मणः क्षत्रियोवैश्यः शूद्रश्चैव प्रमादतः ॥ ३० ॥

यदि अंत्यज ( चांडाल आदि ) वर्तन का जल दही वा दूध चारो वर्णों में से कोई पीले ॥ ३० ॥

ब्रह्मकूर्चोपवासेन द्विजातीनां तु निष्कृतिः ॥

शूद्रस्य चोपवासेन तथा दानेन शक्तितः ॥ ३१ ॥

तो प्रथम तीन वर्णों की शुद्धि ब्रह्मकूर्च व्रत करने से होती है और शूद्र एक उपवास तथा अप्रतीशक्ती पर दान करने से शुद्ध होता है ॥ ३१ ॥

भुंक्ते ज्ञानाद् द्विजश्रेष्ठः चांडालान्नं कथंचन ॥

गोमूत्रयावकाहारो दशरात्रेण शुद्ध्यति ॥ ३२ ॥

यदि किसी भ्रांति बिना जाने चाण्डाल का अन्न ब्राह्मण खालेवे तो गौके मूत्र में यावक पकाकर दस दिन खाने से शुद्ध होता है जान बूझ कर खावे तो चांद्रायण करे ॥ ३२ ॥

एकैकं ग्रासमश्नायाद् गोमूत्रे यावकस्य च ॥

दशाहं नियमस्थस्य व्रतं तत्तु विनिर्दिशेत् ॥ ३३ ॥

इस व्रत में गौके मूत्र में ५ के हुए यावक का एक ही एक ग्रास प्रतिदिन खाना होता है । और दस दिन नियम से रहना पड़ता है ३३

अविज्ञातस्तु चांडालो यत्र वेश्मनितिष्ठति ॥

विज्ञातरूपं संन्यस्य द्विजाः कुर्युरनुग्रहम् ॥ ३४ ॥

जिस्के घर में बिना जाने चाण्डाल रहता हो तो जब उसे जाने भट दूर करे और ब्राह्मणों के उपदेश से प्रायश्चित्त करे ३४ ॥

मुनिवक्त्रोद्गतान् धर्मान् गायतो वेदपारगाः ॥

पतंत मुद्धरेयुस्तं धर्मज्ञाः पापसंकटात् ॥ ३५ ॥

वेद पारंगत ब्राह्मण लोग उस पातित होते मनुष्य का उद्धार ऐसे पाप संकट से पाराशर आदि मुनियों के कहे हुए धर्मों को बतला कर करें ॥ ३५ ॥



दध्नाचसर्पिषाचैव क्षीर गोमूत्रयावकम् ॥

भुंजीतसहभृत्यैश्च त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ ३६ ॥

गौके मूत्र में पके हुए यावकखो दही घी और दूध के साथ अपने मृत्यों समेत भोजन करे और तीनों संध्या स्नान किया करे ॥ ३६ ॥

त्रयहम्भुञ्जीतदध्नाचत्रयहम्भुञ्जीतसर्पिषा ॥

त्रयहंक्षीरेणभुंजीत एकैकेनदिनत्रयम् ॥ ३७ ॥

तीन दिन दही के साथ तीन दिन घी के और तीन दिन दूध के साथ खावे और अंत में पुनः एक २ दिन इन हर एक के साथ खावे तो बारह दिनमें यह व्रत होता है ॥ ३७ ॥

भावदुष्टं न भुंजीत नोच्छिष्टंकृमिदूषितम् ॥

दधिक्षीरस्यत्रिपलं पलमेकंघृतस्यतु ॥ ३८ ॥

अमेध्य बुद्धि जिसमें होजावे उसे न खावे जूठा न खावे और कृमि से दूषित को भी न खावे । दधि और दूध तो तीन २ पल ( अर्थात् १२ तोले ) और घी एक पल ( ४ तोले ) लेवे ॥ ३८ ॥

भस्मनातुभवेच्छुद्धिरुभयोःकांस्यताम्रयोः ॥

जलशौचेनवस्त्राणां परित्यागेनमृण्मयम् ॥ ३९ ॥

कांसे और ताम्र की शुद्धि भस्म ( राख ) से होती है वस्त्रों की जल से और माटी के वर्त्तन की त्याग देने से शुद्धि है ॥ ३९ ॥

कुसुंभगुडकार्पास लवणंतैलसर्पिषी ॥

द्वारेकृत्वातुधान्निदद्याद्विशमनिपावकम् ॥ ४० ॥

कुसुंम, गुड़, कपास, लवण तैल घी और दूसरे अन्न भी घर के द्वार पर निकाल ले और घर में आग जलादे ॥ ४० ॥

एवंशुद्धस्ततःपश्चात्कुर्याद्ब्राह्मणतर्पणम् ॥

त्रिंशतगावृषंचैकंदद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥ ४१ ॥



इस भांति शुद्ध होकर कर पीछे से ब्राह्मण भोजन करावे । तथा तौसगौ और एक बैल ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे ॥ ४१ ॥

पुनर्लेपनखातेन होमजाप्येन शुद्ध्यति ॥

आधारेणच विप्राणां भूमिदोषेन विद्यते ॥ ४२ ॥

पुनः उस गृहकी भूमिको लेपने खने से और होम जाप से शुद्ध कर तथा ब्राह्मणोंको बैठाने से भी भूमिका दोष नहीं रहता है ( यहाँ तक घर में चांडाल रहने का प्रायश्चित्त ९ ( इलोको में जानना ) ॥ ४२ ॥

चांडालैः सहसंपर्कमा समासार्द्धमेववा ॥

गोमूत्रयावकाहारोमासार्द्धेन विशुद्ध्यति ॥ ४३ ॥

यदि चांडालादिकों के साथ एक वा आधे महीने तक ससर्ग रहा हो तो गोमूत्र से पके हुए यावकको १५ दिन खाने से शुद्ध होता है ॥ ४३ ॥

रजकीचर्मकारीचलुब्धकीवेण्डजीविनी ॥

चातुर्वर्ण्यस्यतु गृहेत्वविज्ञातातुतिष्ठति ॥ ४४ ॥

रजकी, ( घोषिन ) चमारी व्याधस्त्री और वेण्डजीविनी, ( धरकारिन ) यदि ये चारों वर्णों में से किसी के घर में बिना जाने रही हों ॥ ४४ ॥

ज्ञात्वातु निष्कृतिं कुर्यात्पूर्वोक्तस्यार्द्धमेवतु ॥

गृहदाहनं कुर्वीत शेषं सर्वं चकारयेत् ॥ ४५ ॥

तो जब जाने तब पहिले कहे हुएका आधा प्रायश्चित्त करे । गृहदाहन करे और सब करे ॥ ४५ ॥

गृहस्याभ्यंतरंगच्छे च्चांडालोयदिकस्यचित् ॥

तमागाराद्विनिःसार्य मृद्धांडंतुविसर्जयेत् ॥ ४६ ॥

यदि किसी के घर में चांडाल चला जावे तो उसे घरके बाहिर निकालकर मिट्टी के बर्तनों को फेंक देवे ॥ ४६ ॥



रसपूर्णतुमृद्भाण्डं नृत्यजेत्तु कदाचन ॥

गोमयेन तु संमिश्रैर्जलैः प्रोक्षौद्गृहंतथा ॥ ४७ ॥

जिन मिट्टिके चूर्तनों में घी तेल आदि रस भरा हो उन्हें न त्यागे और गौ के गोबर से घर लिपवा दें ॥ ४७ ॥

ब्राह्मणस्य व्रणद्वारे पूयशोणितसंभवे ॥

कृमिरुत्पद्यते यस्य प्रायश्चित्तकथं भवेत् ॥ ४८ ॥

यदि ब्राह्मण को व्रण होकर रक्तपीव वहला हो और उसमें कृमि पड़जावें तो उसका प्रायश्चित्त क्यों कर होवे ॥ ४८ ॥

गवांमूत्रपुरीषेण दाघिक्षीरेण सर्पिषा ॥

त्रयहंस्नात्वा च पीत्वा च कृमदष्टः शुचि भवेत् ॥ ४९ ॥

कि तीन दिन तक पंचगव्य से स्नान करे पंचगव्यही खावे तो कृमिदोष से शुद्ध होता है ॥ ४९ ॥

क्षत्रियोऽपि सुवर्णस्य पंचमाषान्प्रदाय तु ॥

गोदाक्षिणांतु वैश्यस्याप्युपवासं विनिदिशेत् ॥ ५० ॥

क्षत्रिय हो तो उसे पांचमाशे सोना भी दान देना होता है और वैश्य को एक उपास करके एक गौ देना होती है ॥ ५० ॥

शूद्राणां नोपवासः स्यात् शूद्रो दानेन शुद्ध्यति ॥

अच्छिद्रमिति यद्वाक्यं वदंति क्षितिदेवताः ॥ ५१ ॥

शूद्रों को उपवास नहीं वे दान मात्र से ही शुद्ध होते हैं ब्राह्मण लोग 'अच्छिद्रमस्तु' इस वाक्यको जब कहें तो ॥ ५१ ॥

प्रणम्य शिरसा ग्राह्यमग्निष्टोमफलं हितम् ॥

जपच्छिद्रतं परिच्छिद्रं यच्छिद्रं यज्ञकर्मणि ॥ ५२ ॥

प्रणाम कर्के साथे चढ़ाना उसका फल अग्निष्टोमयज्ञके तुल्य होता है जप, तप, और यज्ञमें भी जो छिद्र (न्यूनता) हो ॥ ५२ ॥

सर्वं भवति निच्छिद्रं ब्रह्मणैरुपपादितम् ॥



व्याभिव्यसनिनिश्रांतदुर्भिक्षेडामरेतथा ॥ ५३ ॥

सो सब ब्राह्मणों के वाक्यसे परिपूर्ण होजाता हो यदि कोई व्याधि ग्रहस्त हो, किसी पितृ सेवा आदि व्यसनमें पड़ा हो, थका हो दुर्भिक्ष में और राजोपद्रव में पड़ा हो तो ॥ ५३ ॥

उपवासोवृतंहोमोद्विजसंपादितानिवा ॥

अथवावाह्यणास्तुष्टाःसर्वेकुर्वत्यनुग्रहम् ॥ ५४ ॥

उपवास, व्रत, होम आदि ब्रह्मणद्वारा करावे अथवा ब्राह्मणलोग सन्तुष्ट होकर अनुग्रह करे कि तू शुद्धहुआ, तो भी शुद्ध होता है ५४

सर्वान्कामानवाप्नोतिद्विजसंपादितैरिह ॥

दुर्बलेनुग्रहः प्रोक्तस्तथावैवालवृद्धयो ॥ ५५ ॥

ब्रह्मण द्वारा व्रतादि संपादन कराने से वहाँ पर सब कामना पूरी होती हैं और जो दुर्बल हो तथा बालक और वृद्ध इन्में ब्राह्मणोंको (सभासदों वा परिषत् को) अनुग्रह करना चाहिये ॥ ५५ ॥

ततोऽन्यथाभवेदोष स्तस्मान्नानुग्रहःस्मृतः ॥

स्नेहाद्यादि वालोभाद्भयादज्ञानतोऽपिवा ॥ ५६ ॥

इनसे विना दोष होता है इससे औरों में अनुग्रह करना मना है यदि स्नेह लोभ भय अथवा अज्ञानसे औरों पर अनुग्रह करें तो ५७

कुर्वत्यनुग्रहं ये तु तत्पापं तेषु गच्छति ॥

शरीरस्याऽत्यये प्राप्ते वदंति नियमं तु ये ॥ ५७ ॥

वह पाप उन्हीं ब्राह्मणों को लगजाता है । जिसके शरीर नाश हो जाने की इशा हो उसे जो नियम व्रत उपदेश करें ॥ ५७ ॥

महत्कार्योऽपरोधे च न स्वस्थस्य कदाचन ॥

स्वस्थस्य मूढाः कुर्वन्ति वदंति नियमं तु ये ॥ ५८ ॥

अथवा किसी बड़े कर्ममें बड़े हुए को उपदेश करें तथा स्वस्थ मनुष्यों को कदाचित् न करें और जो लोग मूढ़ता से स्वस्थ के बदले आपही नियम व्रत करें ॥ ५८ ॥



भाषा टीका सहित ।

तेतरयविघ्नकर्तारःपतांतिनरकेऽशुचौ ॥

स्वयमेवव्रतंकृत्वाब्राह्मणंयोऽवमन्यते ॥ ५६ ॥

ये सब उसके विघ्नकरनेहारे हैं अति अशुचि नरक में पड़ते हैं ।  
जो कोई ब्राह्मणों को अपमान कर उनसे बिना पूछे आपसी घृण  
करले तो ॥ ५६ ॥

वृथातस्योपवासःस्यान्नसपुण्येनयुज्यते ॥

सएवनियमोग्राह्योयमेकोपिवदेद्विजः ॥ ६० ॥

उस्का उपवास वृथा होता है पुण्य उसे नहीं मिलता उसी  
नियम को करना जिसे एक भी ब्राह्मण बतलादेवे ॥ ६० ॥

कुर्याद्वाक्यंद्विजानांतुअन्यथाभ्रूणहाभवेत् ॥

ब्राह्मणोजंगमतर्थं तीर्थभूताहिसाधवः ॥ ६१ ॥

ब्राह्मणों का वाक्य करे नहीं तो भ्रूणहा ( गर्भहत्यारा ) होता  
है ब्राह्मणलोग जंगम तीर्थ हैं और साधुजन भी तीर्थ हैं ॥ ६१ ॥

तेषावाक्योदकेनैव शुद्धयंतिमलिनजनाः ॥

ब्राह्मणायानिभाषंतमन्यंतेतानिदेवताः ॥ ६२ ॥

उनके बचन रूपी जल से मलीन जन शुद्ध हो जाते हैं । जिन  
यारों को ब्राह्मण कहदेते हैं देवता भी उन्हें मानते हैं ॥ ६२ ॥

सर्वदेवमयोविप्रो नतद्वचनमन्यथा ॥

उपवासोव्रतं चैवस्नानंतीर्थजपस्तपः ॥ ६३ ॥

ब्राह्मण सर्वदेवमय है उसका बचन अन्यथा नहीं । उपास, व्रत,  
स्नान, तीर्थ, जप और तप ॥ ६३ ॥

विप्रैः संपादितं यस्य सम्पूर्णतरयतत्फलम् ॥

अन्नाद्येकीटसंयुक्ते मल्लिकःकेशशूषिते ॥ ६४ ॥

जिस्को ब्राह्मणों ने संपन्न किया उसे उसका सारा फल हाना है ।  
अन्नआदि वस्तु में यदि कीटपड़ें अथवा मक्खी वा केश पड़जायें ॥ ६४ ॥



तदंतरास्पृशेच्चापः तदन्नं भस्मनास्पृशेत् ॥

भुजानश्चैव यो विप्रः पादं हस्तेन संस्पृशेत् ॥ ६५ ॥

तो उसके मध्य जल और भस्म छिड़कने से शुद्ध होता है । जो ब्राह्मण भोजन करते समय हाथ से अपना पांव छूले ॥ ६५ ॥

स्वमुच्छिष्टमसौ भुंक्ते यो भुंक्ते भुक्तभाजने ॥

पादुकास्थो न भुंजीत न पर्यंकस्थितोऽपि वा ॥ ६६ ॥

वह उच्छिष्ट भोजन का प्रत्ववाय पाता है । भुक्तपात्र में भोजन से भी यही दोष है । पादुका पर और खट्वा आदि पर बैठ कर भोजन न करे ॥ ६६ ॥

श्रानचाण्डालदृक् चैव भोजनं परिवर्जयेत् ॥

यदन्नं प्रतिषिद्धस्यादन्त शुद्धिस्तथैव च ॥ ६७ ॥

कुत्ते और चाण्डाल के सामने भोजन न करे । भोजन में जो अन्न प्रतिषिद्ध है और जिस भांती अन्न शुद्धि होती है ॥ ६७ ॥

यथा पराशरेणोक्तं तथैव हि वदामि वः ॥

शृतं द्रोणादकस्यान्नं काकश्चानोपघातितम् ॥ ६८ ॥

ये बातें जिस प्रकार पराशर मुनिने कही हैं मैं भी आप लोगों से उसी ढंग से कहता हूँ एक द्रोणादक ( भर पके हुए अन्न को यदि काक अथवा कुत्ता स्पर्श कर दे ) ॥ ६८ ॥

केन दं शुद्धते चेति ब्राह्मणेभ्यो निवेदयेत् ॥

काकश्चानाऽबलीढंतु द्रोणान्नं न परित्यजेत् ॥ ६९ ॥

तो वह किस भांती शुद्ध होगा ऐसा ब्राह्मणों से पूछे और काक वा कुत्ते का लुटारा हुआ द्रोणप्रमाण अन्न त्याग न करे ॥ ६९ ॥

वेद वेदांग विद्विषैर्धर्मशास्त्रानुपालकैः ॥

प्रस्थाद्वात्रिंशतिर्द्रोणाः स्मृतो द्विप्रस्थ आदकः ॥ ७० ॥

वेद वेदांग जानने वाले और धर्मशास्त्र का पालन करने वाले



ब्राह्मणों ने ३२ प्रस्थों का एक द्रोण और दो प्रस्थ का एक आढक कहा है ॥ ७० ॥

ततोद्रोणाढकस्यान्नं श्रुतिस्मृतिविदोविदुः ॥

काकश्चानावलीढंतु गवाघूतंखरेणवा ॥ ७१ ॥

इसी प्रमाण से द्रोणाढक का अन्न श्रुति स्मृति वेत्ताओं ने अत्याज्य कहा हुआ है जिस अन्न को काक और कुत्ते ने जुठारा हो अथवा गौ वा गधे ने सूँघ लिया हो ॥ ७१ ॥

स्वलपमन्नंत्यजेद्विप्रः शुद्धिर्द्रोणाढकोभवेत् ॥

अन्नस्योद्धृत्यतन्मानं यच्चलालाहतंभवेत् ॥ ७२ ॥

तो थोड़े अन्न को ब्राह्मण त्याग कर देवे और द्रोणाढक भर होने से शुद्धही गिना जाता है किन्तु इतना मात्र करना पड़ता है कि जितने में लाला ( लार ) लगी हो उतना अन्न निकाल कर फेंक देना ॥ ७२ ॥

सवर्णोदकमभ्युक्ष्य हुताशैनवदापयेत् ॥

हुताशनेनसंपृष्टं सुवर्णसलिलेनच ॥ ७३ ॥

और जो शेष है उसको सुवर्ण के जल से सेक करके अग्नि से तपाना जब वह अन्न अग्नि और सोने के जल से संपृष्ट हुआ ७३

विप्राणांब्रह्मघोषेणभोज्यंभवतितत्क्षणात् ॥

स्नेहोवागोरसोवापि तत्रशुद्धिःकथंभवेत् ॥ ७४ ॥

और ब्राह्मणों की वेदध्वनि से उसी छन शुद्ध होकर भोजन के योग्य हो जाता है परन्तु यदि स्नेह ( घी तेल आदि ) अथवा गोरस ( दूध दही ) हो तो उसकी शुद्धि क्यों कर होगी ॥ ७४ ॥

अल्पंपरित्यजेत्तत्रस्नेहस्योत्पवनेनच ॥

अनलज्वालायाशुद्धिर्गोरसस्यविधीयते ॥ ७५ ॥

कि उसमें से थोड़ा निकाल लेना और स्नेह द्रव्य को उत्पवन करनेसे ( अर्थात् कुशा के पत्र से कुछ २ उछाल देने से ) और



गोरस की शुद्धि अग्निज्वाला से होती है ॥ ७५ ॥

इति प्राणिहत्यादिनिष्कृतिर्नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

इति श्रीपराशर स्मृति० षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथातो द्रव्यशुद्धिस्तु पराशरवचो यथा ॥

दारवाणां तु पात्राणां तत्क्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥ १ ॥

अब पराशर जी के वाक्यानुसार द्रव्यों की शुद्धि यों है कि काठ के पात्रों में यदि अमैध्य वस्तु लग जावे तो उन्हें कुछ कुछ झील देने से शुद्धि हो जाती है ॥ १ ॥

मार्जनाद्यज्ञपात्राणां पाणिना यज्ञकर्मणि ॥

चमसानां ग्रहाणां च शुद्धिः प्रक्षालनेन च ॥ २ ॥

आर यज्ञकर्म में यज्ञपात्रों की शुद्धि हाथ से पोंछने करके हो जाती है चमस तथा ग्रह नामक पात्रों की शुद्धि जल से धोने से होती है ॥ २ ॥

चरुणां श्रुकश्रुवाणां च शुद्धिरुष्णेन वारिणा ॥

भस्मना शुद्ध्यते कांस्यं ताम्रमम्लेन शुद्ध्यति ॥ ३ ॥

चरुसुक और श्रुष इन पात्रों की शुद्धि उष्ण जल के प्रक्षालय से होती है । कांसे का पात्र भस्म ( राख ) से मलने से शुद्ध होता है और तामे की शुद्धि अम्ल ( खटाई ) से होती है ॥ ३ ॥

रजसां शुद्ध्यते नारी विकलं यान गच्छति ॥

नदीवेगेन शुद्ध्यते लेपो यदि न दृश्यते ॥ ४ ॥

नारी अर्थात् पित्तल के पात्र की शुद्धि रज ( धूलि वा मिट्टी ) से होती है ( कोई यों अर्थ करते हैं कि नारी अर्थात् स्त्री की शुद्धि रजो-धर्म से होती है ) परन्तु जो विकल अर्थात् अति अष्ट न हुई हो तो । नदी की शुद्धि वेग से होती है यदि लेप न देख पड़े तो ॥ ४ ॥

वापीकूपतडागेषु दूषितेषु कथंचन ॥

उद्धृत्य वैकुंभशतं पचगव्येन शुद्ध्यति ॥ ५ ॥



यदि किसी भांति चापी, कूप, और तड़ाग दूषित हो गए हों तो सौघड़े जल निकाल कर पंचगव्य डालने से शुद्ध होते हैं ॥ ५ ॥

अष्टवर्षाभवेद्गौरी नववर्षातुरोहिणी ॥

दशवर्षाभवेत्कन्या अत ऊर्ध्व रजस्वला ॥ ६ ॥

आठ वर्ष की लड़की गौरी कहलाती, नौ वर्ष की रोहिणी और दस वर्ष की कन्या कहलाती है इससे उपरांत रजस्वला कहाता है ६

प्राप्तेतुद्वादशेवर्षे यः कन्यां न प्रयच्छति ॥

मासि मासि रजस्तस्याः पिबन्ति पितरो निशम ॥ ७ ॥

चारह बरस होने पर जो कन्या को नहीं दान कर देते तो उन के पितर उस कन्याका रज प्रतिमास में पीते रहते हैं ॥ ७ ॥

माता चैव पिता चैव ज्येष्ठो भ्राता तथैव च ॥

त्रयस्ते न रकं यांति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलां ॥ ८ ॥

माता, पिता, और जेठा भाई ये तीनों रजस्वला कन्या को देखने से नरक में जाते हैं ॥ ८ ॥

यस्तां समुद्रहेतु कन्यां ब्राह्मणो मदमोहितः ॥

असंभाष्यो ह्यपांक्तेयः स विप्रो वृषलीपतिः ॥ ९ ॥

जो ब्राह्मण मदसे मोहित होकर उस रजस्वला कन्याको व्याह लेना है वह असंभाषणीय और पंक्तिवाच्य होकर वृषलीपति कहलाता है ॥ ९ ॥

यः करोत्येकरात्रेण वृषलीसेवनं द्विजः ॥

स भैक्ष्यभुग्जपन्नित्यं त्रिभिर्वर्षैर्विशुद्ध्यति ॥ १० ॥

ऐसी वृषली का संग जो द्विज एक रात भर करता है वह तीन वर्ष तक भिक्षा मांग के खाता रहे और नित्यही जप करता रहे तब शुद्ध होता है ॥ १० ॥

अस्तंगते यदा सूर्यो चाण्डालं पतितस्त्रियम् ॥



सूतिकांस्पृशतश्चैव कथंशुद्धिर्विधीयते ॥ ११ ॥

सूरजके अस्त हो जाने पर यदि चाण्डाल, पतित अथवा सूति का स्त्री को छूलेवे तो उसकी शुद्धि क्यों कर हो ॥ ११ ॥

जातवेदंसुवर्णं च सोममार्गविलोक्य च ॥

ब्राह्मणानुमतश्चैव स्नानं कृत्वा विशुद्ध्यति ॥ १२ ॥

जातवेद ( अग्निवाचन्द्रमा ) सुवर्ण और चंद्रपथको देखकर ब्राह्मण की आज्ञालेकर सधैल स्नान करने से शुद्ध होता है ॥ १२ ॥

स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणीब्राह्मणीतथा ॥

तावत्तिष्ठेन्निराहारो त्रिरात्रेणैव शुद्ध्यति ॥ १३ ॥

यदि ब्राह्मणी रजस्वला किसी दूसरी रजस्वला ब्राह्मणी को छूलेवे तो उन रजोधर्म के तीन दिनों तक बिना भोजन किये ही रहै तो तीन दिनों में शुद्ध होती है ॥ १३ ॥

स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणीक्षत्रियांतथा ॥

अर्द्धकृच्छ्रं चरेत्पूर्वापादमेकं त्वऽनंतरा ॥ १४ ॥

यदि ब्राह्मणी रजस्वला क्षत्रिया रजस्वला को छूलेवे तो ब्राह्मणी अर्द्धकृच्छ्र व्रतकरे और क्षत्रिया पादकृच्छ्रकरे ॥ १४ ॥

स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणीवैश्यजां ॥

तथापादहीनं चरेत्पूर्वापादमेकमनंतरा ॥ १५ ॥

ब्राह्मणी रजस्वला वैश्यारजस्वलाका स्पर्शकरे तो ब्राह्मणी त्रिपादकृच्छ्र करे और वैश्य पादकृच्छ्रकरे ॥ १५ ॥

स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणीशूद्रजांतथा ॥

कृच्छ्रेण शुद्ध्यते पूर्वाशूद्रादानेन शुद्ध्यति ॥ १६ ॥

ब्राह्मणी रजस्वला शूद्रा रजस्वला को छूवे तो ब्राह्मणी पूरा कृच्छ्र व्रत करने से शुद्ध होती है और शूद्रा दान देने से शुद्ध होती है ॥ १६ ॥

स्नात्वारजस्वलाया तु चतुर्थे हनि शुद्ध्यति ॥



कुर्याद्रजोनिवृत्तौ देवपितृयादिकर्मच ॥ १७ ॥

जो रजस्वलाहो वह चौथे दिन स्नान करके शुद्ध होती है और देव व पितृ कार्यों को तो रज की निवृत्ति होने पर करे ॥ १७ ॥

रोगेन यद्रजः स्त्रोणामन्वहंतु प्रवर्त्तते ॥

नाशुचिः साततस्तेन ततस्पाद्वैकालिकं मलम् ॥ १८ ॥

यदि रोग करके प्रति दिन स्त्री को रज निकले तो वह उस रज से अशुद्ध नहीं होती क्योंकि वह अकालिक मल गिना जाता है ॥ १८ ॥

साध्वाचारानतावत्स्य द्रजो यावत् प्रवर्त्तते ॥

रजो निवृत्तौ गम्या स्त्री गृहकर्मणि चैव हि ॥ १९ ॥

जब तक रज निवृत्त न हो तब तक साधुकर्म ( देवपूजादि ) स्त्री न करे रज निवृत्त होनेही पर स्त्री गमन के और गृह कार्य के योग्य होती है ॥ १९ ॥

प्रथमे हनिचाण्डाली द्वितीये ब्रह्मघातकी ॥

तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थे हनिशुद्ध्यति ॥ २० ॥

रजोधर्म में पहिले दिन चाण्डाली, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी, और तीसरे दिन रजकी के तुल्य स्त्री रहती है चौथे दिन शुद्ध होती है ॥ २० ॥

आतुरे स्नान उत्पन्ने दशकृत्वो ह्यनातुरः ॥

स्नात्वा स्नात्वा स्पृशेद्देनं ततः शुद्ध्येत स आतुरः ॥ २१ ॥

यदि किसी आतुर ( रोगी आदि ) को नहाना आनपड़े तो अनातुर ( स्वस्थ मनुष्य ) दसबार नहा नहा करके उसे छूवे तब वह आतुर शुद्ध हो जाता है ॥ २१ ॥

उच्छिष्टोच्छिष्टं स्पृष्टः शुनाशूद्रेण वा पुनः ॥

उपोष्य रजनीमेकां पंचगव्येन शुद्ध्यति ॥ २२ ॥



उच्छिष्ट अर्थात् जूठे मुहवाले मनुष्य को दूसरा उच्छिष्ट अर्थात् जूठे मुहवाला पुरुष कुत्ता अथवा शूद्र छेव तो एक रात उपवास करके पंचगव्य खाने से शुद्ध होता है ॥ २२ ॥

अनुच्छिष्टेनशूद्रेण स्पर्शस्नानंविधीयते ॥

तेनोच्छिष्टेनसंस्पृष्टः प्राजापत्यं समाचरेत् ॥ २३ ॥

यदि अनुच्छिष्ट शूद्रने छुआ हो तो स्नान करे और उच्छिष्टने छुआ हो तो प्राजापत्य व्रत करके शुद्ध होता है ॥ २३ ॥

भस्मनाशुद्ध्यतेकांस्यं सुरयाचन्नलिप्यते ॥

सुरामात्रेणसंस्पृष्टं शुद्ध्यतेऽग्न्युपलेखनैः ॥ २४ ॥

भस्म मलने से वह कांसेका पात्र शुद्ध होता है जिसमें सुरा (मदिरा) का लेप न हो और यदि मदिरा से ही छू गया हो तो आग डालने से शुद्ध होता है ॥ २४ ॥

गवाघ्रातानिकांस्यानि श्वकाकोपहतानिच ॥

शुद्ध्यति दशाभिःक्षारैःशूद्रोच्छिष्टानियानिच ॥ २५ ॥

जिस कांसेको गौने संघलिया हो अथवा कुत्ते वा काकने दूषित किया हो तो वह दसबार खारी मिट्टी के मलने से शुद्ध होता है और इसी भांती शूद्रका जूठा कांसा भी शुद्ध होता है ॥ २५ ॥

गंडूषंपादशौचं च कृत्वा वैकांस्यभाजने ॥

षण्मासान्भुविनिक्षिप्य उद्धृत्य पुनराहरेत् ॥ २६ ॥

यदि कांसे के पात्र में कुत्ली करे वा पांव घोवे तो छः महीने तक उसे पृथ्वी में गाड़ रखे अनन्तर निकाल लावे ॥ २६ ॥

आयसेष्वायसानां च सीसस्याग्नौ विशोधनम् ॥

दंतमस्थितथाशृगं रौप्यं सौवर्णं भाजनम् ॥ २७ ॥

लोहे के पात्रको लोहे से धिसे और सीसे को अग्नि में डालने से शुद्ध होती है दंत, हड्डी, शृंग, रूपे और सोने का पात्र ॥ २७ ॥

मणिपान्नाणि शंखश्चेत्येतान्प्रक्षालयेज्जले ॥



पाषाणेनतु मंघर्ष एषां शुद्धिरुदाहता ॥ २८ ॥

मणिपात्र और शंख इन्हें जल में धो डाले और पत्थर से घिसे तो इनकी शुद्धि होती है ॥ २८ ॥

मृण्मयेदहनाच्छुद्धिर्धानानामार्जनादपि ॥

वेण्डवलकलचीराणां क्षौमकार्पासवाससाम् ॥ २९ ॥

मिट्टी के पात्रकी शुद्धि अग्नि में जलाने से और धान्यों को जल के छीटे देने से । वेण्डपात्र अर्थात् वांसकी टोकरी आदि तथा वल्कलचौर ( भोजपत्रादिके दस्त्र ) असली ( तीसी ) और कपास के वस्त्रों की भी ॥ २९ ॥

और्णनेत्रपटानांच प्रोक्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥

मुंजोपस्कररूपीणां शाणस्यफलचर्मणाम् ॥ ३० ॥

इसी भांती जन और नेत्र ( रेशम ) के वस्त्रों की शुद्धि जलक छीटे देने से ही होती है । मुंज, उपस्कर, ( भाड़ आदि ) मूष, शाण की रसी, फल और चर्म की ॥ ३० ॥

तृणकाष्ठस्यरज्जूनामुदकाभ्युत्थणंमतम् ॥

तुलिकाद्युपधानानि रक्तवस्त्रादिकानिच ॥ ३१ ॥

तृण, काठ, रस्सियों की शुद्धि जल छिड़कने से होती है रूई के तकिये, रंगे हुए वस्त्र आदिको ॥ ३१ ॥

शोषयित्वा कृतापेन प्रोक्षणाच्छुद्धितामियुः ॥

मार्जारमल्लिकाकीटपतंगकृमिदुर्गुराः ॥ ३२ ॥

धूप में सुखाकर जलका छीटा दे तो शुद्ध होते हैं बिल्ली, मक्खी कीट, पतंग, कृमि, और डड्ड ॥ ३२ ॥

मेध्यामेध्यंस्पृशन्तोपि नोच्छिष्टं मनुरब्रवीत् ॥

महींस्पृष्ट्वागतंतोयं याश्चाप्यन्योन्यविप्रुषः ॥ ३३ ॥

ये पवित्र और अपवित्र वस्तुओंको छूकर भी ( उच्छिष्टमष्टशु )



नहीं होते ऐसा मनुने कहा है । धरती में गिरकर जो जल आवे और बोलनेमें जो आपस में थूकके कणिके पड़ते हैं ॥ ३३ ॥

भुक्तोच्छिष्टंतथास्नेहं नोच्छिष्टंमनुरव्रवति ॥

तांबूलेक्षुफलेचैव भुक्तस्नेहानुलेपने ॥ ३४ ॥

भोजन से चारम्बार ग्रास लेनेसे अन्न और तेल आदि चारम्बार लेकर लगाने में जूठे नहीं होते यह भी मनुने कहा है । पान, ईख, फल, भोजन किए हुए चिकने ( घी ) का लेप, ॥ ३४ ॥

मधुपर्कचसोमेच नोच्छिष्टंधर्मतोत्रिदुः ॥

रथ्याकर्हमतोयानिनावःपथास्तृणानिच ॥ ३५ ॥

मधुपर्क और सोमलता का रस इनमें जूठापन धर्म से ही नहीं होता है । गली, कीचड़, जल, नौका, सड़क और तृण ॥ ३५ ॥

मारुतार्केणशुद्धंतिपक्वेषुकचितानिच ॥

अदुष्टासतताधारा वातोद्धृताश्चरेणवः ॥ ३६ ॥

सब धूप और वायु लगने से शुद्ध होते हैं इसी भाँति पकी हुई ईंटोंका ढेर भी सदा बहती हुई धारा और वायु से उड़ी हुई धूल भी अशुद्ध नहीं ॥ ३६ ॥

स्त्रियोवृद्धाश्चवालाश्चनदुष्यंतिकदाचन ॥

क्षुतेनिष्ठीवनेचैवदंतोच्छिष्टेतथानृते ॥ ३७ ॥

स्त्री, बालक, और वृद्ध इन्हें भी कभी दोष नहीं । धीकने थूकने, दांतों में जूठा रहजाने, और झूठ बोलने में ॥ ३७ ॥

पतितानांचसंभाषे दक्षिणंश्रवणंस्पृशत् ॥

अग्निरापश्चवेदाश्चसोमसूर्यानिनास्तथा ॥ ३८ ॥

तथा पतित, के साथ बात चीत करने में दहिने कानको छुये । क्योंकि अग्नि, जल वेद, चन्द्रमा, सूर्य और वायु ॥ ३८ ॥

एतेसर्वेपिविप्राणांश्रोत्रेतिष्ठन्तिदक्षिणे ॥



प्रभासादीनितर्थानि गंगाद्यासरितस्तथा ॥ ३६ ॥

ये सभी ब्राह्मणों के दाहिने कान में रहिते हैं । प्रभास आदिक तीर्थ और गंगा आदिक नदियां भी ॥ ३६ ॥

विप्रस्यदक्षिणेकर्णेसान्निध्यंमनुरब्रवीत् ॥

देशभंगेप्रवासेवा व्याधिषुव्यसनेष्वपि ॥ ४० ॥

ब्राह्मण के दक्षिण कर्ण में सन्निहित रहती हैं ऐसा मनुने कहा है । देशोपद्रव में विदेश में, व्याधि और व्यसन में ॥ ४० ॥

रक्षेदेवस्वदेहादिपश्चाद्धर्मसमाचरेत् ॥

येनकेनचधर्मेण मृदुनादारुणेनवा ॥ ४१ ॥

अपने देह आदिकी रक्षा पहिले करले पश्चात्, धर्म करे जिस किसी धर्म से अर्थात् मृदु वा दारुण से ॥ ४१ ॥

उद्धरेद्दीनमात्मानं समर्थो धर्ममाचरेत् ॥

आपत्कालेतुनिस्तीर्णं शौचाऽचारविचिन्तयेत् ॥ ४२ ॥

अपने दीन आत्मा का उद्धार करके पीछे से समर्थ होकर धर्माचरणकरे आपत् काल बीते जाने पर शौच और आचारकी चिन्ता करे ॥ ४२ ॥

शुद्धिसमुद्धरेत्पश्चास्त्वस्थो धर्मसमाचरेत् ॥

इतिपाराशरीये धर्मशास्त्रेद्रव्यशुद्धि

नामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

शुद्धि भी निकालली पीछे से धर्माचरण करना ॥

इति श्रीपाराशर धर्म शास्त्रस्य पण्डित गुरुमसाद कृत

भाषा विद्वतौ द्रव्य शुद्धिर्नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

गवां बंधनयोः केषु भवेन्मृत्युरकामतः

अकामकृतपापस्य प्रायश्चित्तं कथं भवेत् ॥ १ ॥

यदि बांधने वा जोतने समय बिना चाहे ही गौ बैल की मृत्यु



हो जावे तो इस अनचाहे पाप का प्रायश्चित्त क्योंकर होगा ॥ १ ॥

वेदवेदांगविदुषां धर्मशास्त्रविजानताम् ॥

स्वकर्मरताविप्राणां स्वकंपापंनिवेदयेत् ॥ २ ॥

कि वेद वेदांग और धर्म शास्त्रके जानने वाले विद्वानों को अपना पाप कहना ॥ २ ॥

अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि उपस्थानस्य लक्षणम् ।

उपस्थितो हि यायेन व्रतादेशं नमर्हति ॥ ३ ॥

अब उन विद्वानों के पास जाने का प्रकार सुनो जब उचित प्रकार से उनके पास जावे तो व्रतोपदेश के योग्य होता है ॥ ३ ॥

सद्यो निःसंशये पापेन भुंजीतानुपस्थितः ॥

भुजानो वर्धयेत्पापं पर्षद्यन्न न विद्यते ॥ ४ ॥

जहां पर पर्षद ( विद्वानों का सभा ) न हो और पाप किसी को निश्चय करके लग ही जावे तो वह विद्वानों के पास जावे विना गए चाहे जितनी देर लगे भोजन न करे यदि भोजन कर ले तो उसका पाप बढ़ जाना है ॥ ४ ॥

संशये तु न भोक्तव्यं यावत्कर्षं विनिश्चयः ॥

प्रमादस्तु न कर्तव्यो यथैवासंशयस्तथा ॥ ५ ॥

सन्देह पाप का हो गया हो तब भी बिना निश्चय किये भोजन न करे इस में प्रमाद ( गलती या चूक ) कभी न करे जिसमें सन्देह पूर होय सो करे ॥ ५ ॥

कृत्वा पापं न गूहेत गुह्यमानं विवर्द्धते ॥

स्वल्पं वाथ प्रभूतं वा धर्मविदूष्यो निवेदयेत् ॥ ६ ॥

पाप करके छिपावे नहीं छिपाने से बढ़ता है थोड़ा हो वा बहुत हो धर्म विद्वानों से कह सुनावे ॥ ६ ॥

ते हि पापे कृते वेद्याः हतारश्चैव पाप्मनाम् ॥



व्याधितस्य यथा वैद्या बुद्धिमंतोरुजापहाः ॥ ७ ॥

वेही पाप के मारने हारे वैद्य हैं जैसे रोगी मनुष्य के रोग छुड़ाने हारे बुद्धिमान वैद्य होते हैं ॥ ७ ॥

प्रायश्चित्ते समुत्पन्ने हीमान्सत्वपरायणः ॥

मुद्गरार्जवसंपन्नः शुद्धिगच्छेत्तमानवः ॥ ८ ॥

प्रायश्चित्त आ लगे तो लज्जा, धीरता और धारम्भार नम्रतासे युक्त होने से मनुष्य शुद्ध हो सका है ॥ ८ ॥

सचैलो वाग्यतः स्वात्वा क्लिन्नवासाः समाहितः ॥

क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा ततः पर्षदमाव्रजेत् ॥ ९ ॥

मौन होकर वस्त्र समेत नहाले उन्हीं गीले वस्त्रों से सावधानी रख कर क्षत्री हो वा वैश्य हो पर्षत के पास जावे ॥ ९ ॥

उपस्थाय ततः शीघ्रमार्तिमान्धरणीं व्रजेत् ॥

गात्रैश्च शिरसा चैव न च किञ्चिदुदाहरेत् ॥ १० ॥

वहां जा झटपट अति दुःखी हो कर भूमि पर सिर और सारा देह लम्बा कर दडवत् कर और मुंह से कुछ भी न बोले ॥ १० ॥

सावित्र्याश्चापि गायत्र्याः संध्योपास्त्यग्नि कार्ययोः ॥

अज्ञानात्कृषिकर्तारो ब्राह्मणानामधारकाः ॥ ११ ॥

जो ब्राह्मण गायत्री वा सावित्री नहीं जानते तथा संध्या बंदन और अग्निहोत्र नहीं जानते खेती करते हैं यह नाम मात्र के ब्राह्मण हैं ॥ ११ ॥

अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् ॥

सहस्रसः समेतानां परिषत्वं न विद्यते ॥ १२ ॥

विना व्रतवाले, विना मंत्र जानने वाले, जाति मात्रसे ही मासण जीविका करने हारे ब्राह्मण यदि हजारों इकठे हों तो परिषत् नहीं कहे जा सकते ॥ १२ ॥



यद्वदंतितमोमूढामूर्खाधर्ममतद्विदः ॥

तत्पापंशतधाभूत्वा तद्वत्तृणऽधिगच्छति ॥ १३ ॥

जो कुछ वे अज्ञानी और धर्म के न जानने हारे मूर्ख लोग कहते हैं तो वह पाप सौगुणा होकर उन कहने वालों को छगजाता है ॥ १३ ॥

अज्ञात्वाधर्मशास्त्राणिप्रायश्चित्तं ददाति यः ॥

प्रायश्चित्तीभवेत्पूतः किल्बिषं पर्षदि ब्रजेत् ॥ १४ ॥

धर्म शास्त्र बिना जानेही जो प्रायश्चित्त दत्तलाता है तो प्रायश्चित्ती शुद्ध हो जाता है और उसका पाप उस बतलाने हारे पर्षत् में लग जाता है ॥ १४ ॥

चत्वारो वा त्रयो वापि यं ब्रूयुर्वेदपारगाः ॥

स धर्मद्वतिविज्ञेयो नेतैरस्तु सहस्रशः ॥ १५ ॥

चार वा तीन वेदपारग मनुष्य जो कहें वही धर्म जानना दूसरे सैकड़ों वा हजारों के कहने से भी धर्म नहीं होता ॥ १५ ॥

प्रमाणमार्गमार्गतो ये धर्मप्रवदन्ति वै ॥

तेषामुद्विजते पापं सद्भूतगुणवादिनाम् ॥ १६ ॥

प्रमाण का पथ चाहने हारे लोग जो धर्म कहते हैं उन्हीं वस्तुतः सत्यगुण कहने वालों से पाप डरता है ॥ १६ ॥

यथाश्म निश्चितंतोयं मारुतार्केण शुद्ध्यति ॥

तथैव पर्षदादेशात्पापं नश्यति नान्यथा ॥ १७ ॥

जैसे पत्थर में गड़ा हुआ जलवायु और सूर्य के आतप से शुद्ध होता है इसी भांति पर्षत के ही बतलाने से पाप छूटता है अन्यथा नहीं ॥ १७ ॥

नैव गच्छति कर्तारं नैव गच्छति पर्षदम् ॥

मारुतार्कादिसंयोगात्पापं नश्यति तोयवत् ॥ १८ ॥



न कर्ने हारे को और न पर्वत को पाप लगता है किन्तु वायु और सूर्य के संयोग से जल को नाई नष्ट हो जाता है ॥ १८ ॥

चत्वारोवात्रयोत्रापि वेदवंतोऽग्निहोत्रिणः ॥

ब्राह्मणानां समर्थोऽपि परिषत्सामिधीयते ॥ १९ ॥

चार अथवा तीन वेदजानने वाले अग्निहोत्री जो ब्राह्मणों में समर्थ हो उन्हीं को परिषत् कहते हैं ॥ १९ ॥

अनाहिताग्नयोऽन्ये वेदवेदांगपारगाः ॥

पंचत्रयोवाधर्मज्ञाः परिषत्साप्रकीर्तिता ॥ २० ॥

और जो अग्निहोत्री नहीं है परन्तु वेद और वेदांगों को जानते हैं उन्में से पांच वा तीन धर्मवेत्ता मनुष्य जहां एकत्र हों तो वह भी परिषत् कही जाती है ॥ २० ॥

मुनीनामात्मविद्यानां द्विजानां यज्ञयाजिनाम् ॥

वेदव्रतेषु स्नातानामेकोऽपि परिषद् भवेत् ॥ २१ ॥

आत्म विद्या जानने वाले मुनि, यज्ञकर्म करने कराने में निपुण ब्राह्मण और वेद तथा व्रतों में परम निपुण ब्राह्मणों में से एक को भी परिषद् कहते हैं ॥ २१ ॥

पंचपूर्वमथाप्रोक्ता स्तेषां चासंभवे त्रयः ॥

सवृत्तिपरितुष्टाये परिषत्साप्रकीर्तिता ॥ २२ ॥

पहिले मैंने पांच प्रकार कहे उनके असंभव में तीन जो अपनी शक्ति में तुष्ट रहने वाले ब्राह्मण हैं वही परिषत् हैं ॥ २२ ॥

अत ऊर्ध्वं तु यो विप्राः केवलं नाम धारकाः ॥

परिषत्त्वं न तेष्वस्ति सहस्रगुणितेष्वपि ॥ २३ ॥

अनन्तर जो केवल नाम के ब्राह्मण हैं वे हजार गुण भी हों तो उन्में परिषद् नहीं होती ॥ २३ ॥

यथा काष्ठमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः ॥



ब्राह्मणास्त्वनधीयान स्त्रयस्तेनामधारकाः ॥ २४ ॥

जैसे फाँट का हाथी चाल का मृग इसी भाँति दिन पढ़ा ब्राह्मण ये तीनों नाम मात्र के हैं ॥ २४ ॥

ग्रामस्थानं यथाशून्यं यथाकूपं स्तु निर्जलः ॥

यथाहुतमनमनौ च असंज्ञो ब्राह्मणस्तथा ॥ २५ ॥

जैसे सूना गाँव निर्जल कूप, और बिना अग्नि का होम तैसा ही मंत्र हीन ब्राह्मण भी है ॥ २५ ॥

यथा षट्कोफलः स्त्रीषु यथा गौरुषराफला ॥

यथा चाज्ञेफलं दानं तथा विप्रोऽनृचेऽफलः ॥ २६ ॥

जैसे नपुंसक स्त्रियों को निष्फल, ऊषर पृथ्वी निष्फल, और सूर्य को दान दिया निष्फल तैसे ही विना वेद का ब्राह्मण निष्फल है ॥ २६ ॥

चित्रकर्म यथानैर्गैरुन्मील्य तेशनैः ॥

ब्राह्मण्यमपि तद्वद्धि संस्कारैर्मंत्रपूर्वकैः ॥ २७ ॥

जैसे कई रंगों से घी रे २ चित्र बनता है इसी भाँति मंत्रपूर्वक संस्कारों से ब्राह्मणता सिद्ध होती है ॥ २७ ॥

प्रायश्चित्तं प्रयच्छन्ति ये द्विजानामधारकाः ॥

ते द्विजाः पापकर्माणि समतान्नरकं ययुः ॥ २८ ॥

जो नाममात्र के ब्राह्मण प्रायश्चित्त देते हैं वे पापी ब्राह्मण सब नरक में जाते हैं ॥ २८ ॥

ये पठन्ति द्विजावेदं पंचयज्ञरताश्च ये ॥

त्रैलोक्यं तारयंत्येव पंचेन्द्रियरता अपि ॥ २९ ॥

जो ब्राह्मण वेद पढ़ते हैं और पंचयज्ञकर्तृ वे पंचेन्द्रिय रत भी हों तो भी तीनों लोकको तारते ही हैं ॥ २९ ॥

संप्रणीतः शमशानेषु दीप्तीभिः सर्वभक्षकः ॥



तथाचवेदविद्विप्रः सर्वभक्षोऽपिदैवतम् ॥ ३० ॥

जैसे हमशान आदि में जलती हुई आग सब प्रकारकी वस्तु का भक्षण करती है इसी भांति वेदवित् ब्राह्मण सर्व भक्षी हो तो भी देवता ही है ॥ ३० ॥

अमेध्यानितुसर्वाणि प्रक्षिप्यंतेयथोदके ॥

तथैवकिल्बिषंसर्वप्रक्षियेच्चद्विजानले ॥ ३१ ॥

जैसे हर प्रकारके मैले जल में डाले जाने से दूर होते हैं तैसे ही सब पाप ब्राह्मण में डालने से जाता है ॥ ३१ ॥

गायत्रीरहितोविप्रःशूद्रादप्यशुचिर्भवेत् ॥

गायत्रीब्रह्मतत्त्वज्ञाः संपूज्यंतेजनैर्द्विजाः ॥ ३२ ॥

गायत्री रहित ब्राह्मण शूद्रसे भी अधिक अशुद्ध होता है गायत्री और ब्रह्मतत्त्व के जानने हारे ब्राह्मण और लोगों से पूजे जाते हैं ॥ ३२ ॥

दुःशीलोपिद्विजःपूज्योनतुशूद्रोजितेन्द्रियः ॥

कःपरित्यज्यगांदुष्टांदुहेच्छीलवर्तीखरीम् ॥ ३३ ॥

ब्राह्मण दुःशील भी पूजने योग्य है और शूद्र जितेन्द्रिय भी तो न पूजिए कौनऐसा है जो दुष्टा गौको छोड़ बड़ी सूधी गधी को दुहेगा ॥ ३३ ॥

धर्मशास्त्ररथारूढा वेदखड्गंधराद्विजाः ॥

क्रीडार्थमपियन्वूयुःसधर्मःपरमःस्मृतः ॥ ३४ ॥

धर्मशास्त्ररूपी रथ पर चढ़े और वेदरूपी खड्ग को धारण किए जो ब्राह्मण हैं वे क्रीडा के अर्थ भी जो कहें वही परम धर्म होता है ॥ ३४ ॥

चातुर्वेद्योविकल्पीचअंगविद्वर्मपाठकः ॥

त्रयश्चाश्रमिणोमुख्याःपर्वदेषादशावरा ॥ ३५ ॥

चातुर्वेद्य ( चारोंवेद जाननेहारा ) विकल्पी ( धर्म पर्वत्प्रायश्चित्तों



के प्रमाण वाला ) अंग ( वेदांग ) जानने हारा, धर्मशास्त्री और तीनों मुख्यआश्रमी ( ब्रह्मचारी आदि ) यह पर्वत् दस वा दस से अधिक की होती है ॥ ३५ ॥

राज्ञश्चानुमतेस्थित्वाप्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥

स्वयमेवनकर्तव्यं कर्तव्यास्वलपनिष्कृतिः ॥ ३६ ॥

राजा की समति से प्रायश्चित्त बतलावे आपही न बतलावे छोटा प्रायश्चित्त हो तो आपही बतला देवे ॥ ३६ ॥

ब्राह्मणांस्तानतिक्रम्य राजाकर्तुंयदिच्छति ॥

तत्पापंशतधाभूत्वा राजानमनुगच्छति ॥ ३७ ॥

उन ब्राह्मणों का उलंघन करके जो राजा कर्म को इच्छा करे तो वह पाप सौगुणा होकर राजा को जा लगता है ॥ ३७ ॥

प्रायश्चित्तंसदादद्याद्देवतायतनाग्रतः ॥

आत्मकृच्छ्रततःकृत्वाजपेद्वेदमातरम् ॥ ३८ ॥

देवता के मंदिर वा तीर्थ के सामने सदा प्रायश्चित्त देना अनन्तर पर्वद् भी प्रायश्चित्त बतलाने के कारण अपने आपही चूत करे और गायत्री जपे ॥ ३८ ॥

सशिखंवपनंकृत्वात्रिसध्यमवगाहनम् ॥

गत्रांमध्येवसेद्रात्रौ दिवागाश्चाप्यनुब्रजेत् ॥ ३९ ॥

( अब जो प्रायश्चित्त में करना है सो यो है ) कि शिखा सहित मूँड मुडाकर त्रिकाल स्नान, रात को गौओं के बीच रहना, दिन को गौओं के पीछे २ चलना ॥ ३९ ॥

उष्णोवर्षतिशीतेवा भारुतेवातिवामृशम् ॥

नकुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वातुशक्तिः ॥ ४० ॥

गर्मी, वर्षा, शीत अथवा आंधी में भी यथाशक्ति गौओं की रक्षा किए बिना अपनी रक्षा न करे ॥ ४० ॥



आत्मनो यदि वाऽन्येषां गृहे चेत्येव वा खले ॥

भक्षयन्ती न कथये पिवन्तं चैव वत्सकम् ॥ ४१ ॥

अपने वा और किसी के घर खेत अथवा खलिहान में गौ खाती हो तो न बतलावे और बछरा पीता हो तो भी न कहे ॥ ४१ ॥

पिवन्तीषु पिवेत्तोयं संविशन्तिषु संविशेत् ॥

पतितां पंकलग्नां वा सर्वप्राणैः समुद्धरेत् ॥ ४२ ॥

गाय जल पीने लगे तो आप जल पीवे जब वे सोवें वा बैठें तो आप भी सोवें बैठें, गौ कहीं गिरपड़ी हो वा पंक में फँसी हो तो अपना सारा बल लगाकर उसे उठावे ॥ ४२ ॥

ब्राह्मणार्थे गवार्थे वा यस्तु प्राणान् परित्यजेत् ॥

मुच्यते ब्रह्महत्याया गोसा गोब्राह्मणस्थच ॥ ४३ ॥

ब्राह्मण वा गौ के अर्थ जो अपने प्राणों को त्यागे वह ब्रह्महत्या से छूट जाता है तथा जिसने गौ अथवा ब्राह्मण के बध में रक्षा की हो वह भी ब्रह्महत्या से छूट जाता है ॥ ४३ ॥

गोवधस्यानुरूपेण प्राजापत्यं विनिर्दिशेत् ॥

प्राजापत्यं ततः कच्छविभजेत चतुर्विधम् ॥ ४४ ॥

गोवध के अनुरूप ( सदृश ) प्राजापत्य व्रत बतलाना इसी लिये प्राजापत्य और कच्छका चार प्रकार से विभाग करना ॥ ४४ ॥

एकाहमेकभक्ताशी एकाहं नक्तभोजनः ॥

अयाचितात्वेकमहरेकाहं मारुताशनः ॥ ४५ ॥

एक दिन एक भक्त ( एकबार भोजन ) करे, एक दिन रात को खावे, एक दिन विना मांगे जो मिल जाए सो खावे, एक दिन कुछ न खावे ॥ ४५ ॥

दिनद्वयंचैकभक्तो द्विदिनं नक्तभोजनः ॥

दिनद्वयमयाची स्याद्विदिनं मारुताशनः ॥ ४६ ॥



दो दिन एक भक्त करे, दो दिन रात में खावे, दो दिन विनमांगे और दो दिन कुछ न खावे ॥ ४६ ॥

त्रिदिनंचैकभक्ताशीत्रिदिनंनक्तभोजनः ॥

दिनत्रयमयाचीस्यात्त्रिदिनंमारुताशनः ॥ ४७ ॥

तीन दिन एकभक्त, तीन दिन रातकों, तीन दिन विनमांगे और तीन दिन कुछ न खावे ॥ ४७ ॥

चतुरहंत्वेकभक्ताशीचतुरहंक्तभोजनः ॥

चतुर्दिनमयाचीस्याच्चतुरहंमारुताशनः ॥ ४८ ॥

चार दिन नक्त, चार दिन अयाचित और चार दिन वायु भक्षण करे ( यहीचार प्रकार हैं ) ॥ ४८ ॥

प्रायश्चित्तैततस्तीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥

विप्राणांदक्षिणांदद्यात्पवित्राणिजपेद्विजः ॥ ४९ ॥

प्रायश्चित्त करचुके तो ब्राह्मण भोजन करावे ब्राह्मणों को दक्षिणादे और पवित्र मन्त्रों को जप द्विज अर्थात् ब्राह्मण आदि तीनों वर्णों को करना चाहिये ॥ ४९ ॥

ब्राह्मणाम्भोजयित्वातुगोध्नःशुद्धेन्नसंशयः ॥

इति पाराशरस्मृति अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

ब्राह्मणों को भोजन करावे तो गौ की हत्याकरने हारा शुद्ध होता है इस में सन्देह नहीं ॥

इति पाराशरस्मृति अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

गवांसंरक्षणार्थाय नदुष्येद्रोधबंधयोः ॥

तद्वधंतुनतंविद्यात्कामाकामकृतंतथा ॥ ९ ॥

गौऔ की रक्षा के निमित्त यदि उनका रोध ( घर अथवा बाड़े में रोकना ) और बंधन करे और उतनेही से गौ मरजावे तो दोष नहीं क्योंकि इसको गोवध नहीं कहते तथा कामाकामकृत भूल चूक या थोखा थोखा जो हो उसे भी वध न समझना ॥ ९ ॥



दण्डादूर्ध्वयदनोऽन प्रहाराद्यदिपातयेत् ॥

प्रायश्चित्तं तदा प्रोक्तं द्विगुणं गोबधे चरेत् ॥ २ ॥

दण्ड ( जो हाथ के अंगूठे इतना मोटा काष्ठ से अधिक प्रमाण वाले लगुड़ ( लाठी ) आदि से ताड़न करके मार डाले तब अकाम कृत में दूना प्रायश्चित्त गोबध में करे ॥ २ ॥

रोधबन्धनयोत्क्राणि घातश्चेति चतुर्विधम् ॥

एकपादं चरेद्बोधे द्वौ पादौ बन्धने चरेत् ॥ ३ ॥

रोकना बांधना, जोतना, और मारना इन चार प्रकारों से गोबध होता है तो रोध में एक चौथाई व्रत करे और बांधने में दो चौथाई ( आधा ) करे . ३ ॥

योऽक्रोषु त्रिपादं स्याच्चरेत्सर्वं निपातने ॥

गोवाटे वा गृहे वापि दुर्गेष्वथ समस्थले ॥ ४ ॥

जोतने में तीन चौथाई और मारने में साराही प्रायश्चित्त करे गो के बाड़े गृह, दुर्ग, ( किला अथवा बहिर्द्वार जगह जैसे पर्वत आदि ) और समस्थल ( समथर वा मैदान ) ॥ ४ ॥

नदीष्वथ समुद्रेषु त्वन्येषु च नदीमुखे ॥

दग्धदेशे मृता गावः स्तंभनाद्बोध उच्यते ॥ ५ ॥

नदी, समुद्र अथवा और किसी स्थल में नदियों के मुहाने में दग्ध देश ( जहां आग लगी हो ) उस में यदि रोकेनसे गो मर जावे तो उसे रोष कहते हैं ॥ ५ ॥

योऽक्रदामयंदोरैश्च कंठाभरणभूषणैः ॥

गृहे चोपिवने वापि बद्धः स्याद्गौर्मृतो यदि ॥ ६ ॥

योत्क, ( पाश, जोता, वा नाधा, दामक गाड़ी के जुओ का नाधा ) दोर ( रस्सी ) कंठाभरण ( कंठा वा गण्डा ) और भूषण आदि से बंधे हुए गो की मृत्यु चाहे घर अथवा बन में हो जावे तो ॥ ६ ॥



तदेवबंधनंविद्यात्कामाकामकृतंचयत् ॥

हलेवाशकटेपंक्तौपृष्ठेवापीडितोनरैः ॥ ७ ॥

इसीको बंधन समझना और जो कामो काम कृत कहते सो भी यही है हल, गाड़ी और पंक्ति, ( दोचार चौओं को एक साथ जोड़ कर गलबांधने ) में अथवा पृष्ठ ( पीठ पर लादने ) में मनुष्य से पीडित होकर ॥ ७ ॥

गोपतिर्मृत्युमाप्नोतियोत्क्रोभवातितद्वधः ॥

मत्तः प्रमत्तउन्मत्तश्चेत्तनोवाऽप्यचेतनः ॥ ८ ॥

बैल मरजावे तो उसबंधको योक्र कहते हैं । मत्त, ( धनसे ) प्रमत्त, ( मदिरादिसे ) और उन्मत्त, ( ग्रहभूतपिशाचादिसे ) यदि सावधानता अथवा असावधानता में ॥ ८ ॥

कामाकामाकृतक्रोधो दण्डैर्हन्यादथोपलैः ॥

प्रहतावामृतावापितद्धिहेतुर्निपातने ॥ ९ ॥

इच्छा अथवा अनिच्छा से क्रोधकर्के दण्ड अथवा पत्थर से मारे और मरजावे तो इसी को निपातन कहते हैं ॥ ९ ॥

अंगुष्ठमात्रंस्थूलस्तु बाहुमात्रंप्रमाणतः ॥

आर्द्रस्तुसपलाशश्च दण्डइत्यभिधीयते ॥ १० ॥

अंगुष्ठ के तुल्यमोटा और बाहुकी बराबर लंबा और गीला जो पत्ते समेत हो उसे दण्ड कहते हैं ॥ १० ॥

मूर्छितःपतितोवापि दण्डेनाभिहतःसतु ॥

उत्थितस्तुयदागच्छेत्पंचसप्तदशाथवा ॥ ११ ॥

दण्डके मारने से मूर्छित हो अथवा गिरपड़े परन्तु पुनः उठकर यदि पांच सात अथवा दस पांचचले ॥ ११ ॥

आसंवायदिगृहणीयात्तोयंवापिपिवेद्यदि ॥

पूर्वक्याध्युपसृष्टश्चेत्प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ १२ ॥



अथवा घास आदिखाले वा पानी पीके और पहिले से रोगी हो तो उसके मरने पर कुछ प्रायश्चित्त नहीं है ॥ १२ ॥

पिण्डस्थेपादमेकंतुद्वौपादौगर्भसंभिते ॥

पादोनं व्रतमुद्दिष्टं हत्वागर्भमचेतनम् ॥ १३ ॥

पिण्डस्थं, ( पंद्रहदिनों का गौकागर्भगिरावेतो एक चौथाई व्रतकरे, गर्भ संभित ( महीने भर ) के गिराने में दोचौथाई और अचेतन ( सात महीने से पहिलेका ) गर्भगिराने में तीन चौथाई व्रतकरे ॥ १३ ॥

पादेगरोमवपनं द्विपादेश्मश्रुणोपिच ॥

त्रिपादेतुंशिखावर्जं संशिखंतुनिपातने ॥ १४ ॥

एक चौथाई में शरीर के रोममुडन करावे दोचौथाई में रोम और दाढ़ीमूँछभी मुडावे तीन चौथाई में शिखाछोड़ सारे शरीरको मुण्डन करावे और निपातन में तो शिखासमेत गुण्डन करावे ॥ १४ ॥

पादेवस्त्रयुगंचैव द्विपादेकांस्यभाजनम् ॥

त्रिपादेगोवृषदद्याच्चतुर्थेगां द्वयं स्मृतम् ॥ १५ ॥

चौथाई व्रत करे तो वस्त्रब्राह्मण को दक्षिणादे दोचौथाई-अर्थात् आधा व्रत करे तो कांसेका पात्रदे, तीन चौथाई व्रत जब करे तो बल देवे सारा व्रत करे तो दो गौ दक्षिणादे ॥ १५ ॥

निष्पन्नसर्वगोत्रस्तु दृश्यतेवासचेतनः ॥

अंगप्रत्यंगसंपूर्णो द्विगुणंगोव्रतंचरेत् ॥ १६ ॥

जब गौके गर्भ में चेतन अर्थात् जीव पडा हो सारे अंग प्रत्यंग बन गये हों उस समय जो उसका निपात करे तो दूनी गौहत्या व्रत करे ॥ १६ ॥

पाषाणेनैवदंडेन गावोयेनाभिघातिताः ॥

शृंगभंगेचरेत्पादं द्वौपादौ नेत्रघातने ॥ १७ ॥

यदि कोई पत्थर वा दंडे से गौ को मारे और उसकी सींघ टूट जाये वा आँख फूटे तो पहिले में चौथाई और दूसरे में आधा व्रत



करे ॥ १७ ॥

लांगूलेपादकृच्छ्रंतु चैपादावस्थिभंजने ॥

त्रिपादचैवकर्णेतु चरेत्सर्वनिपातने ॥ १८ ॥

पुच्छ तोड़े तो पादकृच्छ्र करे और हड्डी टूटे तो आधा कृच्छ्रकरे  
कान तोड़े तो तीन चौथाई व्रत करे मरजावे तो सारा व्रत करे ॥ १८ ॥

श्रंगभंगेस्थिभंगे च कटिभंगेतथैवच ॥

यदिजीवतिषण्मासान्प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ १९ ॥

सींघ टूटे या हड्डी टूटेअथवा कमर टूटजावे और उसके अनन्तर  
भी वह गौ छ महीने तक जीता रहे तो प्रायश्चित्त नहीं होता है ॥ १९ ॥

ब्रणभगेचकर्त्तव्यः स्नेहाभ्यंगस्तुपाणिना ॥

यवसश्चोपहर्त्तव्यो यावत्दृढवलीभवेत् ॥ २० ॥

यदि गौका फोड़ दे तो अपने हाथ से उसमें तैल वा घी लगावे  
और जब तक वह गो दृढ और वली न हो नव ताई उसको हरी  
घास ले आकर दिया करे ॥ २० ॥

यावत्संपूर्णसर्वांग स्तावत्तंपोषयेन्नरः ॥

गौरूपंब्राह्मणस्याग्रे नमस्कृत्वाविसर्जयेत् ॥ २१ ॥

जब तक उसका सारा अंग पूरा न हो तबतक उसका पोषण  
वह नर करे अनन्तर उस गौ का किसी ब्राह्मणको नमस्कार करके  
दे देवे ॥ २१ ॥

सद्यः संपूर्णसर्वांगो हीनदेहीभवेत्तदा ॥

गोघातकस्यतस्यार्द्धं प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ २२ ॥

जब उसके अंग सब अच्छे होगए हो तब गौका देह छूट जावे  
तो उसमें घातक को आधा प्रायश्चित्तदेना ॥ २२ ॥

काष्ठलोष्टकपाषाणै शस्त्रेणैवोद्धतोबलात् ॥

व्यापादयतियोगांतु तस्यशुद्धिं विनिर्दिशेत् ॥ २३ ॥



काष्ठ ईंट पत्थर अथवा शास्त्रोंसे ही जो उद्धत मनुष्य बला  
स्कारसे गौका मारे तो उसकी शुद्धि यों करनी ॥ २३ ॥

चरेत्सांतपनंकाष्ठे प्राजापत्यंतुलोष्टके ॥

तसकृच्छ्रंतुपाषाणे शस्त्रेणैवातिकृच्छ्रकम् ॥ २४ ॥

सांतपन व्रत काष्ठे से मारने में, ईंटमें प्राजापत्य, पत्थरमें तस  
कृच्छ्र, और शस्त्र से मारने में अति कृच्छ्र व्रत करे ॥ २४ ॥

पंचसांतपनेगावः प्राजापत्येतथात्रयः ॥

तसकृच्छ्रेभवंत्यष्टा वतिकृच्छ्रेत्रयोदश ॥ २५ ॥

सान्तपन व्रत के बदले पांच गौदान होते हैं, प्राजापत्यके  
तीनगौ, तसकृच्छ्र में आठगौ, और अति कृच्छ्र में तेरह गौ  
होती हैं ॥ २५ ॥

प्रमापणोप्राणभृतांदद्यात्तत्प्रतिरूपकम् ॥

तस्यानुरूपंमूल्यंवादद्यादित्यब्रवीन्मनुः ॥ २६ ॥

जिसकी गौ वा कोई पशु मारा हो तो उसके स्वामी को  
वैसाही पशुदेदेवे अथवा दो मनुष्य जो उसका मोल कह दे सो देवे  
ऐसा मनुने कहा है ॥ २६ ॥

अन्यत्रांकनलक्ष्याभ्यां वाहनेमोचनेतथा ॥

सायंसंगोपनार्थं च नदुष्येद्रोधबंधयोः ॥ २७ ॥

वृषोत्सर्ग आदिमें जो शस्त्रसे अंकन (चक्रत्रिशूलादि) होता है  
तथा उसी अंकन के निमित्त जो गोधम से लक्ष्य (चिन्ह) किया  
जाता है उसमें वाहन (गोनलादने) और मोचन (गोनउतारने में  
और संध्या समय में रक्षा केलिये जो रोध और बंध किया जाता है  
उससे गौ मरजावे तो दोष नहीं ॥ २७ ॥

अतिदाहेतिवाहे च नासिकाभेदनेतथा ॥

नदीपर्वतसंचारे प्रायश्चित्तांविनिर्दिशेत् ॥ २८ ॥

यदि अत्यंत दाह (दागना) अथवा वाहन (लादना) को जो



तना ) किंवा नासिका छेदन ( नाकछेदना ) गौकाकर और ऐसी नदी  
अथवा पर्वत में जहां मरने का भयहो चरावे उसमें यदि गौमरजावे  
तो यों प्रायश्चित्तकरे ॥ २९ ॥

अति दाहेचरेत्पादद्वौपादौवाहनैचरेत् ॥

नासिक्येपादहीनंतु चरेत्सर्वनिपातने ॥ २९ ॥

कि अति दाहमेंपाद, दो पाद अति वाहन में नाशनेमेंनीनपाद  
और निपात में सारही प्रायश्चित्त करे ॥ २९ ॥

दहनात्तुविपद्येत अनद्धा योक्त्रयंत्रितः ॥

उक्तंपराशरेणैवह्येकपादंयथाविधि ॥ ३० ॥

यदि गौ घरमें आग लगने से मरजावे जुआ में नधा हुआ  
मरे तो पराशरनेहो एकपाद ( चौथाई ) व्रत यथाविधि करने  
कहा है ॥ ३० ॥

रोधनंबंधनंचैव भारप्रहरणंतथा ॥

दुर्गप्रेरणयोक्त्रं च निमित्तानिवधस्यषट् ॥ ३१ ॥

रोधन, बंधन, भार, प्रहार, दुर्ग अर्थात् विषमस्थल में लेजाना,  
और जुएमें जोतना ये ६ वधके निमित्त हैं ॥ ३१ ॥

बंधपाशसुगुप्तांगो म्रियतेयदिगोपशुः ॥

भवेनेतस्यपार्पस्या त्प्रायश्चित्तार्द्धमर्हति ॥ ३२ ॥

बंधन, और पाश ( गलेका बंधन ) से जकड़ा हुआही यदि  
गौ वा बैल किसी के घरमें मरजावे तो वह भी पापी होना है उसे  
आधा प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ ३२ ॥

ननारिकेलैर्नचशाणवालैर्नचापिमौर्जनैर्नचवल्क शृङ्खलैः

एतैस्तुगावोननिबंधनीया बध्वातुतिष्ठेत्परशुंगृहीत्वा ३३

नारियल, शण, वाल, मुंज, और वल्क ( दरख्त की छाल ) के  
रस्से से और लोहे का शृङ्खले ( सिकड़ी, वा सीकड़ ) इनसे गौका  
नधावे यदि बांधेतो परशु ( काटने का शस्त्र ) लेकर खड़ा रहे ॥ ३३ ॥



कुशै काशैश्चबन्धीयाद्गोण्शुंदक्षिणामुखम् ॥

पाशालमाग्निदग्धेषुप्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ३४ ॥

गौको कुश और काश की रस्सी से दक्षिण मुंह बांधे तो पाश लगे रहने और अग्नि में जलजाने से दोष नहीं ॥ २४ ॥

यदितत्रभवेत्काष्ठंप्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥

जपित्वायावनींदेवीं मुच्यतेसर्वकिल्बिषात् ॥ ३५ ॥

यदि कुश काश की रस्सियों में काष्ठ भी लगाकर बांधा हो तो यों प्रायश्चित्त होनाहै कि गायत्री वा पावमानी ऋचा को अष्टोत्तर सौ जप के उस पाप से छूटता है ॥ ३५ ॥

प्रेरयन्कूपवापीषुवृक्षच्छेदेषुपातयन् ॥

गवाशनेष्टविक्रीणं स्ततः प्राप्नोतिगोवधम् ॥ ३६ ॥

कूप, वापी, और जहांपर वड़े २ वृक्ष काटे जाते हो ऐसों स्थलों में ले जावे अथवा गोमच्छक ( म्लेच्छ ) के हाथ बेचे तो गौवध का प्रायश्चित्त करे ॥ ३६ ॥

आराधितस्तुयः कश्चिद्धिन्न रुद्धोयदाभवेत् ॥

श्रवणंहृदयंभिन्न भग्नोवाकूप संकटे ॥ ३७ ॥

यदि किसी बैल को यत्नसे पुष्ट करके दौड़ाने आदि में उसका कक्ष हीन वा छाती फट जावे अथवा कूप आदि संकट के स्थूल में गिर पड़े ॥ ३७ ॥

कूपादुत्क्रमणेचैव भग्नोवाग्नीवपादयोः ॥

सएवम्रियतेतत्र त्रीन्प्रादास्तुसमाचरेत् ॥ ३८ ॥

कूप से निकलते समय भी यदि गर्दन वा पांव हूट जावे और उसी से वह बैल मरे तीन चौथाई प्राजापत्य व्रतकरे ॥ ३८ ॥

कूपखातेतटाबंधे नदीबंधेप्रपासुच ॥

पानीयेषुविपन्नानांप्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ३९ ॥



पुराने कूपके गर्तमें तटाबंध, ( जिसे बांध कहते हैं ) में नदी बंध ( सेतु वा पुल ) में प्रपा, ( गौमले ) में और यदि पानी के गर्त बीच डूब मरेतो प्रायश्चित्त नहीं होता है ॥ ३९ ॥

कूपखातेतटाखाते दीर्घखातेतथैव च ॥

स्वल्पेषुधर्मखातेषु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४० ॥

कूपखात तटाखात दीर्घ खाते. और छोटे २ जो धर्म खाते हैं इन्मेंगिरकर मरजानेसे प्रायश्चित्त नहीं है ॥ ४० ॥

वेश्मद्वारेनिवासेषुयोनरः खातमिच्छति ॥

स्वकार्यगृहखातेषु प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ४१ ॥

घरके द्वारपर गौओंके निवासस्थल ( रहने की जगह ) में जो कोई अपने कार्य के लिए गतकरे और गृहनिर्माण के लिये जो गतहो इन्में मरजावे तो प्रायश्चित्त होता है ॥ ४१ ॥

निशिवंधनिरुद्धेषु सर्पव्याघ्रहतेषु च ॥

अभिविद्युद्विपन्नेषु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४२ ॥

रातमें बांधले वा निरोध करनेसे, सर्प अथवा व्याघ्र के द्वारा अभि लगने वा विद्युत ( बिजली गिरनेसे जोमरे ) उसमें प्रायश्चित्त नहीं ॥ ४२ ॥

ग्रामघातेशरौघेण वेश्मभंगान्निपातने ॥

अतिवष्टिहतानांच प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४३ ॥

ग्रामको घेरकर शत्रुलोक मारते हो और उनके बाणसे गौ भी मरजावे तथा घरगिरनेसे मरे अथवा बड़ी वृष्टिहोनेसे मरे तो उसमें प्रायश्चित्त नहीं ॥ ४३ ॥

संग्रामेप्रहतानांच येदग्धावेश्मकेषुच ॥

दावाग्निग्रामघातेषु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४४ ॥

संग्राममें, घरके बीच जलकर, दावाग्निमें जंगल में आग लगने से और जब गांवका गांवघात होरहा हो इन स्थूलों में गोमरेतो



प्रायश्चित्त नहीं है ॥ ४४ ॥

यंत्रितागौश्चिकित्सार्थं गूढगर्भविमोचने ॥

यत्नेकृतेविपद्येत प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ ४५ ॥

औषधकेलिये जो गौ बांधी गई हो तथा पेट में जो गर्भ मर गया उसके निकालने में यदि गौ मरे तो दोष नहीं ॥ ४५ ॥

व्यापन्नानांबहूनांच रोधेनेबंधनेपिवा ॥

भिषद्भिथ्योपचारेण प्रायश्चित्तविनिर्दिशेत् ॥ ४६ ॥

बांधने या रोधन करने में यदि बहुत सी गौ मर जावें और वैद्य के छलटे पुलटे औषध देने से मरे तो वहां पर प्रायश्चित्त होता है ॥ ४६ ॥

गोवृषाणांविपत्तौच आवतः प्रेक्षकाजनाः ॥

अनिवारयतांतेषां सर्वेषां गतकंभवेत् ॥ ४७ ॥

यदि गौ वा बैल कहीं कूप आदि में गिरकर वा किसी प्रकार मरजावे और उनके बचाने में यत्न न करे चुपचाप जो लोग देखा करें उन सबको प्रायश्चित्त होता है ॥ ४७ ॥

एकोहतोयैर्बहुभिः समेतैर्नज्ञायेतस्यहतोभिघातात् ॥

दिव्येनतेषामुपलभ्यहंता निवर्त्तनीयो नृपसन्नियुक्तैः ४८

जहां कई मनुष्यों ने मिल कर एक को मारा हो और यह न पूछ पड़े कि किसकी चोट से गौ मरी तो दिव्य ( शपथ आदि ) से उनके बीच मारने हारे का निश्चय करके राजनियुक्त मनुष्य उसे अलग कर सब को दिखावा दे ॥ ४८ ॥

एकाचेद्बहुभिः काचिद्वैवाद्यापादितकचित् ॥

पादं पादं तु हत्याया इचरेयुस्ते पृथक् पृथक् ॥ ४९ ॥

यदि एक गौको कई मनुष्यों ने मारा हो तो वे सब एक एक चौथाई प्रायश्चित्त करें ॥ ४९ ॥



हतेतुरुधिरेदृश्यंव्याधि अस्तः कृशोभवेत् ॥

लालाभवतिदष्टेषु एवमन्वेषणं भवेत् ॥ ५० ॥

किस कारण से गौ की मृत्यु हुई इसके जानने का उपाय यों है कि बधिर देख पड़े तो मारा हुआ जानना कृश ( दुबला होकर मरा हो तो व्याधि से मरा जाने लाला ( मुंह से लार ) बहती हो तो साँप के काटने से मरा जाने ॥ ५० ॥

ग्रासार्थचोदितोवापि अध्वानं नैव गच्छति ॥

मनुना चैवमेकेन सर्वशास्त्राणि जानता ॥ ५१ ॥

और खाने के लिए प्रेरणा करने में भी न चले तो भी उसे कष्टित जानना ऐसा मनुजी ने जो सर्व शास्त्रज्ञाता हैं इन्की मृत्यु का हेतु जानने का उपाय कहा है ॥ ५१ ॥

प्रायश्चित्तं तु तेनोक्तं गोघ्नं चांद्रायणं चरेत् ॥

केशानां रक्षणार्थाय द्विगुणं व्रतमाचरेत् ॥ ५२ ॥

उन्होंने प्रायश्चित्त भी यों कहा है कि गोघ्न से चांद्रायण करावे और यदि केशों का मुंडन न करावे तो दूना व्रत करे ॥ ५२ ॥

द्विगुणे व्रत आदिष्ठे दक्षिणाद् द्विगुणा भवेत् ॥

राजा वाराजपुत्रो वा ब्राह्मणो वा बहुश्रुतः ॥ ५३ ॥

दूने व्रत में दक्षिणा भी दूनी होती है राजा, राजाका पुत्र, अथवा बहुश्रुत ब्राह्मण ॥ ५३ ॥

अकृत्वा वपनं तेषां प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥

यस्य न द्विगुणं दानं केशाश्च परिरक्षतः ॥ ५४ ॥

कोई भी यदि हत्यारों को केशमुंडन करावे बिना दूना प्रायश्चित्त न करावे ॥ ५४ ॥

तत्पापं तस्य तिष्ठेत्तस्मै च रकं ब्रजेत् ॥

यत्किंचित्क्रियते पापं सर्वकेशेषु तिष्ठति ॥ ५५ ॥



तो वह पाप उसका रहता है और देह त्याग करने पर नरक में पड़ता है जो कुछ पाप करे सो सब केशों में रहता है ॥ ५६ ॥

सर्वान्केशान्समुद्धृत्य छेदयेदंगुलिद्वयम् ॥

एवंनारीकुमारीणां शिरसोमुडनंस्मृतम् ॥ ५६ ॥

स्त्री और कुमारी का मुंडन यों होता है कि सारा केश पकड़ के ऊपर २ का दो दो अंगुल बाल काट लेवे ॥ ५६ ॥

नस्त्रियाः केशवपनं नदूरेशयना सनम् ॥

नचगोष्ठेवसेद्रात्रौ नदिवागाअनुव्रजेत् ॥ ५७ ॥

स्त्रियों को सारे केशका मुंडन, दूर होकर सोना, बैठना, गौ-शाखा में रात का रहना, और दिनमें गौओं के पीछे पीछे जाना ये काम नहीं करने होते हैं ॥ ५७ ॥

नदीषुसंगमे चैव अरण्येषुविशेषतः ॥

नस्त्रीणामजिनंवासोव्रतमेवसमाचरेत् ॥ ५८ ॥

विशेष करके नदी नदियों के संगम और जंगल में स्त्रियों को न बास देना तथा मृगचर्म भी उन्हें न पहिनाना ऐसी भांति उनसे व्रत कराना चाहिए ॥ ५८ ॥

त्रिसंध्यंस्नानमित्युक्तं सुराणामर्चनंतथा ॥

बंधुमध्येव्रतंतासां कृच्छ्रचांद्रायणादिकम् ॥ ५९ ॥

त्रिकाल स्नान देवताओं का पूजन और अपने बंधुओं के मध्य रहना इस भांति स्त्रियों का कृच्छ्र चांद्रायणादि व्रत होता है ॥ ५९ ॥

गृहेषुसततंतिष्ठेच्छुचिर्नियममाचरेत् ॥

ब्रह्मयोगोवधं कृत्वाप्रच्छादयितुमिच्छति ॥ ६० ॥

घर में ही सदा पवित्र रह कर स्त्रियां नियम करें जो कोई गोहत्या करके इस संसार में छिपाना चाहना है सो ॥ ६० ॥

सयातिनरकंघोरं कालसूत्रमतंशयम् ॥



विमुक्तो नरकात् तस्मान्मर्त्यलोके प्रजायते ॥ ६१ ॥

घोर नरक कालसूत्र नाभी में निस्सन्देह जा पड़ता है उस नरक से छूट कर जब पुनः मर्त्यलोक में आता है तो ॥ ६१ ॥

क्लीबोदुःखी च कुष्टी च सप्तजन्मनि वै नरः ॥

तस्मात्प्रकाशयेत्पापं स्वधर्मसततं चरेत् ॥ ६२ ॥

क्लीब ( नपुंसक ) दुःखी और कुष्टी सात जन्म तक होता है इस हेतु पाप को प्रकट करके सदा अपने धर्म को करे ॥ ६२ ॥

स्त्रीवालभृत्यगोविप्रे ष्वतिकोपं विवर्जयेत् ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे गोरक्षणार्थं गोविपारि

प्रायश्चित्तं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ६ ॥

स्त्री, बालक, भृत्य ( नौकर ) गौ और ब्राह्मण इनके ऊपर अति क्रोध न करे ।

इति श्री ००००० नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

चातुर्वर्ण्येषु सर्वेषु हितां वक्ष्यामि निष्कृतिम् ॥

अगम्यागमने चैव शुद्धौ चांद्रायणं चरेत् ॥ १ ॥

चारों वर्णों के लोगों के लिए बड़ी हितकारी शुद्धि अवकाशना ( अपनी बीबी के बिना ) अन्य स्त्री में जाने तो चान्द्रायण व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ १ ॥

एकैकं ह्रासयेद्ग्रासं कृष्णशुक्ले च वर्द्धयेत् ॥

अमावास्यां न भुंजीत ह्येष चांद्रायणो विधिः ॥ २ ॥

कृष्णपक्ष में एक २ ग्रास घटाते जाना, और शुक्ल पक्ष में एक एक घटाते जाना और अमावास्या को कुछ भी भोजन न करे यही चान्द्रायणी विधि है ॥ २ ॥

कुक्कुटान्दप्रमाणं तु ग्रासं वैपरिकल्पयेत् ॥

अन्यथा जातदोषेण न धर्मो न च शुद्ध्यते ॥ ३ ॥



प्राथिश्चत्तैतश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥

गोद्वयंवस्त्रयुग्मंच दद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥ ४ ॥

कुत्तकट ( सुगी ) के अंडे की बराबर ग्रास बनाना यदि घट  
बढ़ करे तो दोष होने से धर्म और शुद्धि दोनों नहीं होती है ॥ ३ ॥

चांडालीवाश्वपाकीवा अनुगच्छतियोद्विजः ॥

त्रिरात्रमुपवासित्वा विप्राणामनुशाशनात् ॥ ५ ॥

मातश्चित्त करचुके नो ब्राह्मण भोजन करावे और दोगी तथा  
दोवस्त्र ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे ॥ ४ ॥

सशिखंवपनंकृत्वा प्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥

ब्रह्मकूर्चततः कृत्वा कुर्याद् ब्राह्मणतर्पणम् ॥ ६ ॥

जोद्विज चाण्डाली अथवा श्वपाकी में गमन करता है वह तीन  
दिनरात उपवासकरके ब्राह्मणों की आज्ञा से ॥ ५ ॥

गायत्रीचजपन्नित्यं दद्याद्गोमिथुनद्वयम् ॥

विप्रायदक्षिणांदद्या च्छुद्धिमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ७ ॥

शिखासमेते सुण्डन कराकर दोप्राजापत्य करे अनन्तर ब्रह्मकूर्च  
मतकरके ब्राह्मण भोजन करावे ॥ ६ ॥

गोद्वयंदक्षिणांदद्या च्छुद्धिंपाराशरोब्रवीत् ॥

क्षत्रियोवाथ वैश्योवा चांडालीगच्छतोपिवा ॥ ८ ॥

गायत्री का नित्यही जपकरे और दोबैल तथा दोगी ब्राह्मण  
कोदे तथा दक्षिणाभी देतो निश्चय करके शुद्ध होता है ॥ ७ ॥

दक्षिणा दो गौदे ऐसी शुद्धि पराशर ने कही है यदि क्षत्रिय  
अथवा वैश्य चाण्डाली में गमन करेतो ॥ ८ ॥

प्राजापत्यद्वयंकुर्यात् दद्याद्गोमिथुनद्वयम् ॥

श्वपाकीवाथचांडालीं शूद्रोवायदि गच्छति ॥ ९ ॥



दो प्राजापत्य कर्के दोगौ दो बैल दान दे । यदि कोई शूद्र अथवा  
की अथवा चाण्डाली में जावे ॥ ६ ॥

प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रं चतुर्गोमिथुनं ददेत् ॥

मातरं यदि गच्छेत्तु भगिनीस्वसुतां तथा ॥ १० ॥

तो प्राजापत्य कृच्छ्र कर्के चार गौ चार बैल दान दे यदि कोई  
माता, बहन, और निज पुत्री में गमन करे ॥ १० ॥

एतास्तु मोहितो गत्वा कृच्छ्राणि त्रीणि संचरेत् ॥

चांद्रायणत्रयं कुर्याच्छिश्नच्छेदेन शुद्ध्यति ॥ ११ ॥

तो मोह से इन्में गमन कर्के तीन कृच्छ्र व्रत करे और तीन  
चांद्रायण भी करे तदनंतर लिंग काटडाले तब शुद्ध होता है ॥ ११ ॥

मातृष्वसृगमेवैव आत्ममोहानि कृंतनम् ॥

अज्ञानेन तु योगच्छेत्कुर्याच्चांद्रायणत्रयम् ॥ १२ ॥

मासी में भी गमन करे तो अपना लिंग काटडाले जो कोई इन्में  
अज्ञान से गमन करे वह तीन चांद्रायण करे ॥ १२ ॥

दशगोमिथुनं दद्याच्छुद्धिं पाराशरो ब्रवीत् ।

पितृदारान्समारुह्य मातुराप्तांच भ्रातृजाम् ॥ १३ ॥

दस गौ और दस बैल दान दे तो पराशर ने शुद्धि कही है पिता  
की बियों में ( अर्थात् अपनी माता को सौतिनी में ) गमन करे  
अथवा माता की सखी में वा भाई की कन्या में ॥ १३ ॥

गुरुपत्नीं स्नुषां च भ्रातृभार्यान्थैव च ॥

मातुलानीं सगोत्रांच प्राजापत्यत्रयं चरेत् ॥ १४ ॥

गुरु की पत्नी में, पुत्र की वधू में, भाई की स्त्री में, मामी, सार  
सगोत्रा स्त्री में, गमन करे तो तीन प्राजापत्य व्रत करे ॥ १४ ॥

गोद्वयंदक्षिणां दत्वा मुच्यते नात्र संशयः ॥

स्थादिगमने मोहिष्युद्धीकर्षीस्तथा ॥ १५ ॥



और देा गौ दक्षिणादेतो शुद्ध होता है पशु, वेश्या भैस ऊंदिन  
यानरी, ॥ १५ ॥

खरीचसूकरीं गत्वा प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

गोगामीचत्रिरात्रेण गामेकांब्राह्मणे ददेत् ॥ १६ ॥

गधी और शूकरी में गमन करे तो प्राजापत्य व्रत करे गौ में  
गमन करे तो तीन दिन रात उपवास करे एकगौ ब्राह्मणको दे ॥ १६ ॥

महिष्युष्टूः खरीगामी त्वहोरात्रेण शुद्धयति ॥

अमरेसमरेवापि दुर्भिक्षे वा जनक्षये ॥ १७ ॥

भैस, ऊंदिन और गधी में यदि एक ही वार गमन करे तो  
एक दिन रात उपवास करने से शुद्ध होता है डाका, युद्ध, दुर्भिक्ष,  
( अकाल ) महामारी ॥ १७ ॥

बन्दिग्रहे भयार्तो वा सदा स्वस्तीं निरीक्षयेत् ॥

चाण्डालैः सह संपर्वयानारी कुरुते ततः ॥ १८ ॥

बन्धु से दासी करण, राजा और चोर के भय से सदा अपनी  
स्त्री की रक्षा करनी जो स्त्री चाण्डाल का संग करती है तो ॥ १८ ॥

विप्रान्दशवरान्कृत्वा स्वयंदोषं प्रकाशयेत् ॥

आकंठसंमिते कूपे गोमयोदककर्दमे ॥ १९ ॥

वह बड़े उत्कृष्ट दश ब्राह्मणों के सामने अपने दोष को कहे  
और गले पर्यंत किसी कूप वा गर्त में जल और गोबर की कीचड़  
बनाकर ॥ १९ ॥

तत्र स्थित्वानि राहारा त्वहोरात्रेणानिष्क्रमेत् ॥

सशिखं वपनं कृत्वा भुंजीयाद्यावत् कौदनम् ॥ २० ॥

उसमें दिन रात बिन भोजन किए ही खड़े रहे अनन्तर निकल  
कर दूसरे दिन शिखा समेत मुण्डन कराव और यवका भात खावे २०

त्रिरात्रमुपवासित्वा त्वेकरात्रं जले वसेत् ॥



शखपुष्पीलतामुलं पत्रं वा कुसुमं फलम् ॥ २१ ॥

तदनन्तर तीनदिन उपवास करके एक दिन रात जल में लगी रहे सातवें दिन शख पुष्पी लता का फल, फूल, जड़ वा पत्ते में से कोई एक ॥ २१ ॥

सुवर्णपंचगव्यंचक्राथयित्वा पिबेज्जलम् ॥

एकभक्तंचरेत्पश्चाद्वावत्युष्पवती भवेत् ॥ २२ ॥

और सोना तथा पंचगव्य इन सबों को इकट्ठा जल में ओढ़ उस जल को पीछे पीवे जब तक रजस्वला न हो एक भक्त व्रत करती रहै ॥ २२ ॥

व्रतंचरतितद्यावत्तावत्संवसतेवहिः ।

प्रायश्चित्तेतत्तश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ २३ ॥

जब ताई व्रत करे तब तक बाहर निवास करे प्रायश्चित्त करके ब्राह्मण भोजन करावे ॥ २३ ॥

गोद्वयंदक्षिणांदद्याच्छुद्धिं पाराशरो ब्रवीत् ॥

चातुर्वर्ण्यस्य नारीणां कृच्छ्रचान्द्रायणंचरेत् ॥ २४ ॥

दो गौ दक्षिणा दे तो शुद्ध होती है ऐसा पाराशर ने कहा है यदि इच्छा पूर्वक चारों वर्णों को स्त्रियां चाण्डाल का संग करें तो एक कृच्छ्र और एक चान्द्रायण व्रत करें ॥ २४ ॥

यथाभूमिस्तथानारी तस्मात्तानतुदूषयेत् ॥

बन्दिग्राहेण याभुक्ता हत्वा बद्धा बलाद्गयात् ॥ २५ ॥

जैसी पृथ्वी तैसी ही स्त्री होती है इस से उसको दूषण न देवे जो स्त्री बलात्कार से बांध मार करके दासी बनाई जाकर भोगी गई हो ॥ २५ ॥

कृत्वा सातपथं कृच्छ्रं शुद्ध्येत्पाराशरो ब्रवीत् ॥

सकृत्भुक्ता तु यानारी नैच्छंती पापकर्मभिः ॥ २६ ॥



तो वह सान्तपन कृच्छ्र करके शुद्ध होती है ऐसा पराशर ने कहा जिस विन चाहती स्त्री को पाप कर्मियों ने एक ही बार भोग किया हो ॥ २६ ॥

प्राजापत्येनशुद्धयेतऋतुप्रस्रवणेन च ॥

पतत्यर्द्धशरीरस्य यस्यभार्यासुरापिवेत् ॥ २७ ॥

वह प्राजापत्य व्रत और ऋतुकाल में रज के बहने से शुद्ध होती है जिसका भार्या सुरा पी ले तो उसकी आधा शरीर पतित होती है ॥ २७ ॥

पतितार्द्धशरीरस्य निष्कृतिर्नविधीयते ॥

गायत्रीजपमानस्तु कृच्छ्रंसांतपनंचरत् ॥ २८ ॥

जिसका आधा शरीर पतित हुआ उसकी शुद्धि नहीं वह गायत्री जपता हुआ कृच्छ्र सान्तपन व्रत को करे ॥ २८ ॥

गोमूत्रंगोमयंतीरदधिसर्पिः कुशोदकम् ॥

एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रंसांतपनंस्मृतम् ॥ २९ ॥

एक दिन गोमूत्र पीकर रहै दूसरे दिन गोबर, तीसरे दिन गौ का दूध, चौथे दिन गौका दही, पांचवें दिन घी, छठे दिन कुशा का जल पीकर रहै और सातवें दिन उपवास व्रत करे यही कृच्छ्र सांतपन व्रत कहा है ॥ २९ ॥

जारेणजनयेद्गर्भं मृतेत्यक्तेगतेपतौ ॥

तांत्यजदपरेराष्ट्रे पतितांपापकारिणीम् ॥ ३० ॥

जो स्त्री अपने पति के मरने, त्यागने, और विदेश जाने पर जार से गर्भवती हो तो उस पापिनी को दूसरे राज्य में छोड़ आना ॥ ३० ॥

ब्राह्मणीतुयदागच्छेत्परपुन्सासमान्विता ॥

सातुनष्टाविनिर्दिष्टानतस्यागमनंपुनः ॥ ३१ ॥

जो ब्राह्मणी किसी दूसरे पुरुष के साथ जावे तो वह नष्टा



कहाती है उसको पुनः आगमन नहीं होता ॥ ३१ ॥

कामान्मोहाच्चयोगच्छेत्त्यक्त्वावंधून्सुतागपतिम् ॥

साऽपिनष्टापरलोकेमानुषेषुविशेषतः ॥ ३२ ॥

जो अपने बंधु, सुन, और पति को छोड़ कर काम अथवा मोह से चली जावे वह भी परलोक में नष्टा होती है और इस लोक में तो अधिक नष्टा होती है ॥ ३२ ॥

मदमोहगतानारी क्रोधाद्विद्विताडिता ॥

अद्वितीयगताचैव पुनरागमनंभवेत् ॥ ३३ ॥

कोई स्त्री मद मोह से चली जावे और क्रोध में आकर दण्ड आदि से ताड़ित होकर यदि अकेली जावे तो उसका पुनः आगमन होता है ॥ ३३ ॥

दशमेतुदिनेप्राप्तेप्रायश्चित्तंनविद्यते ॥

दशाहंनत्यजेन्नारी तजजन्नष्टस्तुतांतथा ॥ ३४ ॥

यदि दस दिन बाहर हो बीत जावें तो प्रायश्चित्त नहीं हो सक्ता इस लिए दस दिन तक स्त्री को त्याग कर न रखना दस दिन त्याग हो रहै तो स्वयं नष्ट होकर ॥ ३४ ॥

भर्तावैवचरेत्कृच्छ्रं कृच्छ्राद्धं वैववांधवाः ॥

तेषांभुक्ताचपीत्वाच अहोरात्रेणगुह्ययति ॥ ३५ ॥

भर्ता भी एक कृच्छ्र व्रत करे और संवधि आधा कृच्छ्र व्रत करे उनके घर भोजन करने और पानी पीने से दिन रात उपवास करे तो शुद्ध होता है ॥ ३५ ॥

ब्राह्मणीतुयदागच्छे त्परपुंसाविवर्जिता ॥

गत्वापुंसांशतंयाति त्वेज्युस्तांतुगोत्रिणः ॥ ३६ ॥

ब्राह्मणी यदि अकेली चलीजावे और सौ पुरुषों के पास जाकर आवैतो उसे गोत्री लोग छोड़दवे ॥ ३६ ॥

पुंसोयदिगृहंगच्छेत्तदाशब्दगृहंभवेत् ॥



पितृमातृगृहंयच्च जारस्यैवतुतद्गृहम् ॥ ३७ ॥

यदि वह अपने पुरुष के घर जावे तो वह घर अशुद्ध हो जाता है माता पिता के घर जावे तो वह जारकाही घर होता है ॥ ३७ ॥

उल्लख्यतद्गृहपश्ची त्वंचगव्येनशोधयेत् ॥

त्यजेच्चमृण्मयंपात्र वस्त्रकाष्ठंचशोधयेत् ॥ ३८ ॥

उसघर को भूमि और मिट्टी को कुछ २ छीलकर पीछे पंचगव्य में लीपदेवे । मिट्टी के वर्तनों को फेंकदेवे और वस्त्र तथा काष्ठ को धो डाले ॥ ३८ ॥

संभारांश्शोधयेत्सर्वान् गोबालैश्चफलोद्भवान् ॥

ताम्राणिपंचगव्येन कांस्यानिदशभस्मभिः ॥ ३९ ॥

और भी जो घरकी वस्तु हैं उन्हीं शुद्ध करडाले अर्थात् फल से बनेहुए को गोवालों से ताम्र को पंचगव्य से और कांसे के वर्तनों को दसवार भस्म लगाने से शुद्धकरे ॥ ३९ ॥

प्रायश्चित्तंचरेद्विप्रो ब्राह्मणैरुपपादितम् ॥

गोद्वयंदक्षिणांदद्यात्प्राजापत्यद्वयं चरेत् ॥ ४० ॥

यदि ब्राह्मणहो तो दूम्बर ब्राह्मणों का कहाहुआ प्रायश्चित्त करे दो गौ दक्षिणादेवे और दो प्राजापत्यकरे ॥ ४० ॥

इतेरषामहोरात्र पंचगव्यंनशोधनम् ॥

उपवासैर्ब्रतैः पुण्यः स्नानसंथ्यार्चनादिभिः ॥ ४१ ॥

और वर्ण हो तो एक दिन रात उपवास कर्के पंचगव्य से शुद्ध होते हैं । उपवास, ब्रत, पुण्य, स्नान, संध्या, और पूजन आदि ४१

जपहोमदयादानैः शुद्ध्येतब्राह्मणादयः ॥

आकाशंवायुरग्निश्च मध्येभूमिगतंजलम् ॥ ४२ ॥

जप, होम, दया और दान इतनी बातोंसे ब्राह्मण आदि वर्ण शुद्ध होते हैं । आकाश, वायु, अग्नि, और पृथ्वी पर पड़ा हुआ शुद्ध जल ये सब ॥ ४२ ॥



ननुष्यंनिचदर्भाश्च यज्ञेषुचमसायथा ॥

इति पाराशरीये धर्म शास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

और कुशा जैसे यज्ञों में चमसे पात्र को दोष नहीं लगता इसी भांति सदा शुद्धही रहते हैं ॥

इति श्रीपाराशरीये धर्म शास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अमेध्यरेतो गोमांसं चाण्डालन्नमथापि वा ॥

यदिभुक्तं तु विप्रेण कृच्छ्रं चाद्रायणं चरेत् ॥ १ ॥

यदि कोई ब्राह्मण अमेध्य ( मनुष्य को हड्डी, शव, विष्टा, मूत्र, ऋतुरज, वसा, मस्त्रेद, नेत्रमल, श्लेष्मा ) और वाय तथा गोमांस अथवा चाण्डाल का अन्न इनमें से एक भी वस्तु अपनी इच्छा पूर्वक खाले तो चाद्रायण करे अनिच्छा से खावे तो कृच्छ्र व्रत करे ॥ १ ॥

तथैव क्षत्रियो वैश्योऽप्यर्द्धचाद्रायणं चरेत् ॥

शूद्रोऽप्येवं यदाभुंक्ते प्राजापत्यसमाचरेत् ॥ २ ॥

और क्षत्रिय वा वैश्य खा लेवे तो आधा चाद्रायण करें शूद्र भी खावे तो प्राजापत्य व्रत करे ॥ २ ॥

पंचगव्यं पिवेच्छूद्रो ब्रह्मकूर्चं पिवेद्द्विजः ॥

एकद्वित्रिचतुर्गावोदद्याद्विप्राद्यनुक्रमात् ॥ ३ ॥

व्रत करने पर शूद्र तो पंचगव्य पीवे और त्रिनि वर्ण ब्रह्मकूर्च पीवें तथा क्रम से एक दो तीन और चार गौ चारों वर्णों को दद्यात् ॥

शूद्रान्नसूतकान्नञ्च अभोज्यस्यान्नमेव च ॥

शंकितं प्रतिषिद्धान्नं पूर्माच्छिष्टं तथैव च ॥ ४ ॥

भी देनी पडती है ॥ ३ ॥

शूद्रका अन्न, सूतक का अन्न, चन्द्र सूर्य ग्रहण से दिया अन्न अभोज्य मनुष्य का अन्न, शंकित ( अर्थात् भोज्य है वा अभोज्य है इस शंकाका आस्पद ) अन्न प्रतिषिद्ध अन्न ( देवनिर्मल्य आदि ) और उच्छिष्ट ( जूठा ) अन्न ॥ ४ ॥



यदिभुक्तंतुविप्रेण अज्ञानादापदापिवा ॥

ज्ञात्वासमाचरेत्कृच्छ्रं ब्रह्मकूर्चं तु पावनम् ॥ ५ ॥

यदि ब्राह्मण भोजन करते चाहे अज्ञानसे अथवा विपत्ति में तो पीछे जानकर कृच्छ्रव्रत कर और कूर्च पीवे तां शुद्ध होता है ॥ ५ ॥

बालैर्नकुलमार्जारै रन्नमुच्छिष्टितं यदा ॥

तिलदधोदकैः पूक्ष्य शुद्धतेनात्रसंशयः ॥ ६ ॥

बालक ( जो पांच वर्ष से अधिक न हो ) नेवरा, बिल्ली इन सबोंने यदि अन्नको जूठा किया हो तो तिल और कुशाके जलसे उसको प्रोक्षण करे तो निस्सन्देह शुद्ध होता है ॥ ६ ॥

शूद्रोऽप्यभोज्यं भुक्त्वान्नं पंचगव्येन शुद्ध्यति ॥

क्षत्रियोवापि वैश्यश्च प्राजापत्येन शुद्ध्यति ॥ ७ ॥

शूद्र ने भी अभोज्य अन्नका भोजन किया हो तो पंचगव्य पीने से शुद्ध होता है और क्षत्रिय वा वैश्य ने खा लिया हो तो प्राजापत्य करने से शुद्ध होते हैं ॥ ७ ॥

एकपंक्त्युपविष्टानां विप्राणां सह भोजने ॥

यद्येकोपित्यजेत्पात्रं शेषमन्नं न भोजयेत् ॥ ८ ॥

एक पंक्ति में बैठे हुए ब्राह्मणों में से यदि एक भी भोजन करना छोड़ दे तो औरों को भी भोजन छोड़ देना चाहिए ( अर्थात् शेष अन्न उच्छिष्ट हो जाता है ) ॥ ८ ॥

मोहाद्भुंजीतयस्तत्र पंक्ताबुच्छिष्टभोजने ॥

प्रायश्चित्तं चरेद्द्विपूः कृच्छ्रं सातपथं तथा ॥ ९ ॥

यदि कोई ब्राह्मण मोहसे उक्त पंक्ति में उच्छिष्ट अन्न को भोजन करे तो कृच्छ्र सान्त्तपन व्रत कर यही प्रायश्चित्त है ॥ ९ ॥

पीयूषं श्वेतलशुनं वृताकफलं गृजनम् ॥

पलाण्डुवृक्षनिर्यासान् देवस्वंकवकानि च ॥ १० ॥



पीयूष ( नवीन जल ) श्वेतलघुन, श्वेतवृताक, ( भंडा, बैंगन वा  
बताक ) गंजन, पलाण्डु, ( प्याज वा गदठे ) वृक्षों का निर्यास  
( गोंद ) देवस्व ( देवता का चढ़ी हुई वस्तु ) और कवक ( घनाक  
कुरमुख ) ॥ १० ॥

उष्ट्रीक्षीरमवीक्षीर मज्ञानाद्भुंजतेद्विजः ॥

त्रिरात्रमुपवासेन पंचगव्येन शुद्ध्यति ॥ ११ ॥

ऊटनी का दूध, और भेडाका दूध जो अज्ञान से ब्राह्मण पीवे  
खाले तो तीन दिन उपवास करके पंचगव्य पीवे तब शुद्ध होता है ॥

मण्डूकं भक्षयित्वा तु भूषिकामांसमेव च ॥

ज्ञात्वा विपुस्त्वहोरात्रं यावकान्नेन शुद्ध्यति ॥ १२ ॥

मण्डूक ( डूँचा या मेघा ) और भूषिक ( चूहे ) का मांस ब्राह्मण  
जान कर, खा ले तो दिन रात यावक ( यत्नका भात ) खाने से  
शुद्ध होता है ॥ १२ ॥

क्षत्रियश्चापि वैश्यश्च क्रियावन्तौ शुचिब्रतौ ॥

तद्गृहे तु द्विजैर्भोज्यं हव्यकव्येषु नित्यशः ॥ १३ ॥

जो क्षत्रिय और वैश्य पवित्र रहते और धर्म किया करते हैं  
उनके घर में ब्राह्मण को देव पितृ कार्यों में सदा भोजन  
करना चाहिये ॥ १३ ॥

घृतं क्षीरं तथा तैलं गुडं स्नेहेन पाचितम् ॥

गत्वा नदी तटे त्रिंशो भुंजीयाच्छुद्धभोजनम् ॥ १४ ॥

शुद्ध के घरका घी तेल दूध गुड और घी से पका हुआ पदार्थ  
जो हो इतनी ही वस्तुओं का भोजन केवल ब्राह्मणको करना चाहिये  
सो भी नदी के तट पर जाकर खाना शुद्ध के घर में न खाना ॥ १४ ॥

मद्यमांसरतं नित्यं नीचकर्मप्रवर्तकम् ॥

तं शूद्रं वर्जयेद्विप्रः श्वपाकमिव दूरतः ॥ १५ ॥

जो शूद्र मद्य और मांस में नित्य ही रत हो ( अर्थात् येचता हो )



और नीच कर्म अर्थात् ( यमडा काटना इत्यादि ) को कराता हो उस शुद्रको ब्राह्मण दूर से ही श्वापाक का नाई चरावे ॥ १५ ॥

द्विजशुश्रूषणरतान्मद्यमांसविवर्जितान् ॥

स्वकर्मनिरतान्नित्यं तांश्छूद्रान्नित्यजेद्द्विजः ॥ १६ ॥

जो शुद्र द्विजों की शुश्रूषा में रत हो, मद्य मांस को छोड़े हुए हों नित्य ही अपने कर्म में रत रहे : उन शुद्रों को द्विज कभी न त्यागे ॥ १६ ॥

अज्ञानादभुजते विप्राः सूतके मृतकेपि वा ॥

प्रायश्चित्तं कथं तेषां वर्णो वर्णो विनिर्दिशेत् ॥ १७ ॥

यदि ब्राह्मण लोग बिना जाने सूतक अथवा मृतक में भोजन करने लगे तो उनका हर एक वर्णों के गृह में खाने से पृथक् २ प्रायश्चित्त यों कहना चाहिये कि ॥ १७ ॥

गायत्र्यष्टसहस्रेण शुद्धिः स्याच्छूद्रसूतके ॥

वैश्ये पञ्चसहस्रेण त्रिसहस्रेण क्षत्रिये ॥ १८ ॥

शुद्र के घर सूतक में भोजन करें तो आठ सहस्र गायत्री जपने से शुद्धि होती है, वैश्य के सूतक में पांच सहस्र और क्षत्रियों के घर तीन सहस्र से शुद्धि होता है ॥ १८ ॥

ब्राह्मणस्य यदा भुंक्ते द्वे सहस्रे तु दापयेत् ॥

अथवा वामदेव्येन साम्ना चैकेन शुद्ध्यति ॥ १९ ॥

और ब्राह्मण के घर सूतक में भोजन किए हो तो दो सहस्र गायत्री जपे अथवा वामदेव्य साम का एक ही पाठ करे तो भी शुद्ध होता है ॥ १९ ॥

शुष्कांश्च गोरसं स्नेहं शूद्रवेश्मन आहृतम् ॥

पक्वं विप्रगृहे भुक्तं भोज्यं तन्मनुरब्रवीत् ॥ २० ॥

सूखा अन्न, गोरस, और स्नेह ( अर्थात् घी तेल ) शूद्र के घर से लाकर ब्राह्मण के घर में पकाया हो तो मनुजी ने उसे भोजन करने के योग्य कहा है ॥ २० ॥



आपत्कालेतुविप्रेणभुवंतरुद्रगृहेयदि ॥

मनस्तापेनशुद्धयतेद्रुपदांवासकृजपैत् ॥ २१ ॥

यदि आपत्काल में ब्राह्मण ने शूद्र के घर भोजन किया हो तो मनमें सन्ताप करने से शुद्ध होता है अथवा एकवार (द्रुपदा) मंत्र का जप करदे ॥ २१ ॥

दासनापितगोपालकुलमित्रार्द्धसीरिणः ॥

एतेशूद्रेषुभोज्यान्ना यश्चात्मानंनिवेदयेत् ॥ २२ ॥

दास, नापित, गोपाल, अपने कुलका मित्र, और अर्द्धसीरी इतने शूद्रों का अन्न भोजन करना चाहिए तथा जिस शूद्र ने आप को समर्पण कर दिया हो उसका भी अन्न भोज्य है ॥ २२ ॥

शूद्रकन्यासमुत्पन्नो ब्राह्मणेनतुसंस्कृतः ॥

असंस्काराद्भवेद्दासः संस्कारादेवनापितः ॥ २३ ॥

जो शूद्र की कन्या में ब्राह्मण से उत्पन्न हुआ उसका यदि संस्कार करदे तो नापित हो जाता है और संस्कार न हुआ तो वही दास कहलाता है ॥ २३ ॥

क्षत्रियाच्छूद्रकन्यायांसमुत्पन्नास्तुयःसुतः ॥

सगोपालइतिख्यातोभोज्येविप्रैर्नसंशयः ॥ २४ ॥

जो पुत्र शूद्र की कन्या में क्षत्रिय से उत्पन्न हो उसे तो पालक कहते हैं उसका अन्न निस्संदेह ब्राह्मणों को खाना चाहिए ॥ २४ ॥

वैश्यकन्यासमुद्भूतोब्राह्मणेनतुसंस्कृतः ॥

सौह्यर्द्धिकइतिज्ञेयो भोज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २५ ॥

ब्राह्मण से वैश्य की कन्या में जो उत्पन्न हो और संस्कार भी उसका हो तो वही अधिक (अर्द्धसीरी) है निस्संदेह उसका अन्न ब्राह्मणों को भोज्य है ॥ २५ ॥

भांडस्थितमभोज्यानां जलं दधिघृतं पयः ॥

अकामतस्तुयोभुवंते प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ २६ ॥



यदि अभोज्यों के चर्तन में रखले हुए जल, दधि, घी, और दूध जो बिनाजाने खाले उसका प्रायश्चित्त क्यों करहो ॥ २६ ॥

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा उपसर्पति ॥

ब्रह्मकूर्चोपवासेन योज्या वर्णस्य निष्कृतिः ॥ २७ ॥

चारों वर्णों में से चाहे जो होतो उसकी शुद्धि ब्रह्मकूर्च के पीकर और एक उपवास करने से हो जाता है ॥ २७ ॥

शूद्राणां नोपवासः स्याच्छूद्रोदानेन शुद्ध्यति ॥

ब्रह्मकूर्चमहोरात्रं श्वपाकमपिशोधयेत् ॥ २८ ॥

शूद्रों को उपवास नहीं करना होना शूद्र दान देनेसे शुद्ध होता है ब्रह्मकूर्च पीकर दिन रात रहे तो श्वपाक भी शुद्ध हो जाता है ॥ २८ ॥

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिः कुशोदकम् ॥

निर्दिष्टं पंचगव्यं च पवित्रं पापशोधनम् ॥ २९ ॥

गौका मूत्र, गोधर, दूध, दही घी, और कुशोंका जल येही मिलकर पंचगव्य होता है जो परम पवित्र और पापों को शोधने हारा है ॥ २९ ॥

गोमूत्रं कृष्णवर्णायाः श्वेतायाश्चैव गोमयम् ॥

पयश्च ताम्रवर्णायारक्तायाश्च ह्यते दधि ॥ ३० ॥

काली गौका मूत्र, श्वेत गौका गोधर ताम्रवर्णा गौका दूध, और लाल गौका दही ॥ ३० ॥

कपिलाया घृतं ग्राह्यं सर्वं कपिलमेव वा ॥

मूत्रमेकपलंदद्या दंगुष्ठा र्द्धं तु गोमयम् ॥ ३१ ॥

कपिला गौका घी, अथवा ये सब वस्तु कपिलाही की लेनी मूक एक पल ( ४ तोला ) लेना, अर्द्ध अंगुष्ठ तुल्य गोधर लेना ॥ ३१ ॥

क्षीरं सप्त पलंदद्या दधि त्रिपलमुच्यते ॥



घृतमेकपलंदद्यात्पलमेकंकुशोदकम् ॥ ३२ ॥

दूध सातपल ( २८ तोले ) देना, दही तीन पल ( १२ तोले ) देना, घी एक पल ( ४ तोले ) देना, कुशोदक भी एक पल देना ॥ ३२ ॥

गायत्र्यादायगोमूत्रंगंधद्वारेतिगोमयम् ॥

आप्यायवेतिचक्षीरं दधिक्रावणस्तथाद्वधि ॥ ३३ ॥

गायत्री पढ़कर गो मूत्र लेना, ( गन्धद्वार ) मन्त्र पढ़कर गोबर लेना ( आप्यायस्व ) इस मन्त्र से दूध, ( दधिक्रावण ) इस मन्त्र से दही, ॥ ३३ ॥

तेजोसिशुक्रमित्याज्यं देवस्यत्वाकुशोदकम् ॥

पंचगव्यंमृचापूतं स्थापयेदग्निसन्निधौ ॥ ३४ ॥

( तेजोसिशुक्रम् ) इस मन्त्र से घी लेना, ( देवस्यत्वा ) इस मन्त्र से दही, कुशादेकलेना, उक्तमृचाओं से पवित्र किए हुए पंचगव्यको अग्निके समीप रखना ॥ ३४ ॥

आपोहिष्टेति चालोढ्यमानस्तोकेतिमंथनम् ॥

सप्तवारास्तुयेदर्भा अच्छिन्नाग्राः शुकत्विषः ॥ ३५ ॥

( आपोहिष्टा ) इस मन्त्र से उसे हिष्ठाना, और ( मानस्तोक ) इस मन्त्र से मंथन करना अनन्तर सप्तवार ( अर्थात् सात अपराधों को निवारण करने हारे ) ऐसे कुशों से कि जिनका अग्रभाग कटान हो और हरे हो ॥ ३५ ॥

एतेरुद्धृत्यहोतव्यं पंचगव्यं यथाविधि ॥

इरावतीइदंविष्णुर्मानस्तोकेचशंवती ॥ ३६ ॥

इन कुशाओं से पंचगव्य उठाकर विधि पूर्वक होम करना करने की मृचाएं ( इरावती ) ( इदं विष्णुर ) ( मानस्तोक ) ( शंवती ) ये हैं ॥ ३६ ॥

होतव्यं हुतशेषं पिवेद्द्विजः ॥



आलाह्यप्रणवेनैव निर्मथ्यप्रणवेनतु ॥ ३७ ॥

इन्हीं से होम करना होम से जो बच रहै उसे (द्विजलोगों) पीवे कि प्रणव पाठकर उसका आलोचन करें उसी प्रणव से ही मथे ॥ ३७ ॥

उद्धृत्यप्रणवेनैव पिवेच्चप्रणवेनतु ॥

यत्त्वगस्थिगतं पापं देहेतिष्ठति देहिनाम् ॥ ३८ ॥

और प्रणव से ही निकाल कर प्रणव ही से पीवे जो कुछ हड्डी और बमड़े में मनुष्यों का पाप रहता है ॥ ३८ ॥

ब्रह्मकूर्चं दहत्सर्वं यथैवाग्निरिवेन्धनम् ॥

पवित्रं त्रिषु लोकेषु देवताभिरधिष्ठितम् ॥ ३९ ॥

उसे यह ब्रह्मकूर्च सम्पूर्ण रूप से भस्म कर देता है जैसे आग ईंधन को जला देती है यह तीनों लोक में पवित्र है और देवताओं से अधिष्ठित होता है अर्थात् इसमें देवता रहते हैं ॥ ३९ ॥

वरुणश्चैव गोमूत्रे गोमये हव्यवाहनः ॥

दध्नि वायुः समुद्दिष्टः सोमः क्षीरे घृते रविः ॥ ४० ॥

वरुण गोमूत्र में, गोबर में अग्नि दही में वायु घी में सूर्य, और वृष में चन्द्रमा रहते हैं ॥ ४० ॥

पिवतः पतितं तोयं भोजने मुखानिःसृतम् ॥

अपेयं तद्विजानीयाद्भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥ ४१ ॥

पानी पीते समय जो पानी गिर पड़े और भोजन करते समय जो अन्न मुख से निकल पड़े तो वह पानी न पीना चाहिए और अन्न खाना न चाहिए यदि खावे तो चान्द्रायण व्रत करे ॥ ४१ ॥

कूपे च पतितं दृष्ट्वा श्वशृगालञ्च मर्कटम् ॥

अस्थि चर्मादिपतितं पीत्वा मेघप्राश्नपो द्विजः ॥ ४२ ॥

यदि कूप में कुत्ता, गीदड़, और घानर की हड्डी अथवा चर्म पड़ा



हुआ देखे और उस अपवित्र जलको द्विज पीले तो आगे जो प्रायश्चित्त कहेंगे सो करे ॥ ४२ ॥

नारंतुकुणपंकाकंविड्वराहंखराष्ट्रकम् ॥

गावयंसौप्रतिकंच मायूरंखड्गकंतथा ॥ ४३ ॥

तथा मनुष्य कौबे, गांव के सूकर, गधे वा ऊंट गवय, सुप्रतिक, मयूर और गैंडे ॥ ४३ ॥

वैयाघ्रमार्त्तसैहंवाकूपेयदिनिमज्जति ॥

तडागस्थाऽथदुष्टस्यपीतस्यादुदकंयादि ॥ ४४ ॥

व्याघ्र, रीछ, और सिंह का सुर्दा, यदि कूप अथवा तडाग में डूब गया हो और उसका दुष्ट जल यदि कोई पीवे ॥ ४४ ॥

प्रायश्चित्तंभवेत्पुंसः क्रमेणैतेनसर्वशः ॥

विप्रःशुद्ध्येत्त्रिरात्रेण क्षत्रियस्तुदिमद्वयात् ॥ ४५ ॥

तो क्रम से सारा ऐसा प्रायश्चित्त पुरुष को होता है कि ब्राह्मण तीन दिन और क्षत्रिय दो दिन के उपवास से शुद्ध होता है ॥ ४५ ॥

एकाहेनतुवैश्यस्तुशूद्रोऽनक्तेनशुद्ध्यति ॥

परपाकनिवृत्तस्य परपाकरतश्च ॥ ४६ ॥

वैश्य एक दिन के उपवास से और शूद्र नक्त ( रात में ) भोजन करने से शुद्ध होता है । परपाकनिवृत्त और परपाकरत ॥ ४६ ॥

अपचस्यचभुक्त्वान्नं द्विजश्चांद्रायणचरेत् ॥

अपचस्यतुयद्दानं दातुरस्यकुतः फलम् ॥ ४७ ॥

तथा अपचकाअन्न यदि द्विज खालेवे तो चान्द्रायण करे जो कोई अपचको देता है तो उस दाता को फलकहां है ॥ ४७ ॥

दाताप्रतिग्रहीताच द्वौतौनिरयगामिनौ ॥

गृहीत्वार्भिसमाराप्य पंचयज्ञान्ननिर्वपेत् ॥ ४८ ॥

दाता और प्रतिग्रहीता वे दोनोंही नरक में जाते हैं । जो अग्नि



समारोपण करके पंचयज्ञों को नहीं करता ॥ ४८ ॥

परपाकनिवृत्तोसौ मुनिभिः परिकीर्तितः ॥

पंचयज्ञान्स्वयंकृत्वापरान्नेनोपजीवति ॥ ४९ ॥

मुनियों ने उन्हे परपाक निवृत्त कहा है । जो पंचयज्ञों को करके के अन्नसे जीता है ॥ ४९ ॥

सततंप्रातरुत्थायपरपाकरतस्तुतः ॥

गृहस्थधर्मोयोविप्रो ददातिपरिवर्जितः ॥ ५० ॥

सदा प्रातः काल उठकर सो परपाकरत कहलाना है । जो ब्राह्मण गृहस्थ धर्मी होकर देता नहीं ॥ ५० ॥

ऋषिभिर्धर्मतत्त्वज्ञैरपचः परिकीर्तितः ॥

युगेयुगेचयेधर्मा स्तेषुतेषुचयेद्विजाः ॥ ५१ ॥

उसे धर्मतत्त्व को जानने हारे ऋषियोंने अपच कहा है । युग २ दूसरे के जो धर्म है और उनयुगों में जो द्विज है ॥ ५१ ॥

तेषांनिन्दानकर्त्तव्यायुगरूपाहितेद्विजाः ॥

हुंकारंब्राह्मणस्योक्त्वात्वंकारंचगरीयसः ॥ ५२ ॥

उनकी निन्दा न कर्णी चाहिये क्योंकि वे द्विज युगरूपही हैं । यदि ब्राह्मण को हुंकार कर और बड़े को त्वंकार ( तू ) कहै ॥ ५२ ॥

स्नात्वातिष्ठन्नहःशेषमभिवाद्य प्रसादयेत् ॥

ताडयित्वातृणेनापिकंठेवध्वापिवाससा ॥ ५३ ॥

तो जिनना वह दिन शेषहो उतनी बेर तक स्नान करके बैठा रहै और उनको प्रणाम करके प्रसन्न करावे तिनकेसे भी मारे अथवा गले में बस से भी बांधे ॥ ५३ ॥

विवादेनापिनिर्जित्यपूणिपत्यपूसादयेत् ॥

अवगूर्यत्वहोरात्रंत्रिरात्रंक्षितिप्रातने ॥ ५४ ॥

अथवा विवाद में भी जित ले तो प्रणाम करके प्रसन्न करावे



मारन को दंडआदि उठावे तो एक दिनरात, उठाकर धनी पर फेंके  
तो तीन दिन ॥ ५४ ॥

अतिकृच्छ्रं च रुधिरं कृच्छ्राभ्यन्तरशोणिते ॥

नवाहमतिकृच्छ्रः स्यात्पाणिपूरान्नभोजनः ॥ ५५ ॥

और मारने से रुधिर निकल अवे तो अतिकृच्छ्र, चमड़े के  
भीतर ही रुधिर जमजावे तो कृच्छ्र ब्रतकर नव दिन तक एक पसर  
( मूठी वा प्रमृति ) भर अन्न भोजन करके रहै ॥ ५५ ॥

त्रिरात्रमुपवासः स्यादतिकृच्छ्रः स उच्यते ॥

सर्वेषामेव पापानां संकरेण मुपस्थिते ॥ ५६ ॥

अनन्तर तीन दिन उपवास करे तो अति कृच्छ्रब्रत होता है  
सब पापों का जब संकर ( मेल ) होजावे तो ॥ ५६ ॥

दशसाहस्रमभ्यस्ता गायत्री शोधनं परम् ॥

दस सहस्र गायत्री का जप करने से परम शोधन होता है  
इति पाराशरे धर्मशास्त्रे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

इति एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

दुःस्वप्नं यदि पश्येत्तु बांतिवाचुरकर्मणि ॥

मैथुने प्रेतधूमं च स्नानमेवाविधीयते ॥ १ ॥

यदि दुःस्वप्न देखे, वमन करे, क्षौर करावे, मैथुन करे, प्रेत  
धूमलगे तो स्नान मात्र विहित है ॥ १ ॥

अज्ञानात्प्राश्य विण्मूत्रं सुरासस्पृष्टमेव च ॥

पुनः संस्कारमर्हति त्रयोवर्णाद्विजातयः ॥ २ ॥

अज्ञान से यदि विष्टा वा मूत्रखा पीले और सुरा ( मद्य ) से  
मिला हुआ पदार्थ खाले तो तीनों द्विज वर्ण पुनः संस्कार के योग्य  
हो जाते हैं ॥ २ ॥

अजिनं मेखलादंडैः भैक्षचर्याव्रतानि च ॥



निवर्ततेद्विजातीनां पुनः संस्कारकर्मणि ॥ ३ ॥

पुनःसंस्कार जब द्विजों का होता है तो अजिन, ( मृगचर्म )  
मेखला, और दण्ड, पलाशादि का तथा भक्ष्यचर्या और व्रत ये  
मही करने पड़ते ॥ ३ ॥

विष्मूत्रायचशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यंममाचरेत् ॥

पंचगव्यंचकुर्वीतस्नात्वापीत्वाशुचिर्भवेत् ॥ ४ ॥

और विष्टा मूत्र की शुद्ध होने के लिए प्राजापत्य व्रत करे पंच  
गव्य भी करे स्नान के उपरांत उसे पीकर शुद्ध होते हैं ॥ ४ ॥

जलाम्पितनेचैव प्रव्रज्यानाशकेषु च ॥

वृत्यावासतवर्णानांकथंशुद्धिर्विधीयते ॥ ५ ॥

जो मनुष्य जल में डूब कर वा अग्नि में जलकर अथवा पहाड़  
से गिरकर किंवा अन्यासी होकर अनशन व्रत करके मर्नामनसे  
चाहे हो और इस अपनी संकल्प वृत्तिसे बच रहे हों ( अर्थात् )  
उपायों से मरने को साध न सके हों ) तो उन चारों वर्ण के लोगों  
की शुद्धि क्यों कर हो ॥ ५ ॥

प्राजापत्यद्वयेनैव तीर्थाभिगमनेन च ॥

वृषेकादशदानेन वर्णाः शुद्ध्यंतितेत्रयः ॥ ६ ॥

तीनों वर्ण तो यों शुद्ध होते हैं कि दो प्राजापत्य करके किसी  
तीर्थ में जा स्नान कर और दस गौ एक बैल दान दें ॥ ६ ॥

ब्राह्मणस्यप्रवक्ष्यामिवनंगत्वाच तुष्यथे ॥

सशिखंवपनंकृत्वाप्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥ ७ ॥

और ब्राह्मण की शुद्धि यों होगी वन में जाकर चौराहे के मध्य  
बैठ कर शिखा अपने सुण्डन करावे दो प्राजापत्य व्रत करे ॥ ७ ॥

गोद्वयंदक्षिणांदद्याच्छुद्धिंपाराशरोब्रवीत् ॥



मुच्यते तेन पापेन ब्राह्मणत्वं च गच्छति ॥ ८ ॥

दो गौ दक्षिणादेतो शुद्ध होता है ऐसा पराशरने कहा उस पापसे मुक्त होकर पुनः ब्राह्मणता को पाता है ॥ ८ ॥

स्नानानि पंच पुण्यानि कीर्तितानि मनीषिभिः ॥

आग्नेयं वारुणं ब्राह्म्यं वायव्यं दिव्यमेव च ॥ ९ ॥

पांच प्रकार के स्नान पण्डितों ने पवित्र कहा है अर्थात् आग्नेय, वारुण, ब्राह्म, वायव्य, और दिव्य ॥ ९ ॥

आग्नेयं भस्मना स्नानं भवगाह्यतु वारुणं ॥

आपो हि ष्ठीति च ब्राह्म्यं वायव्यं गौरजः स्मृतम् ॥ १० ॥

भस्म सारे अंगमें मलनेसे आग्नेय स्नान होता है जल में नहाने से वारुण ( आपो हि ष्ठा ) इस मंत्रसे मार्जन करने से ब्राह्म गौरज से वायव्य ॥ १० ॥

यत्तु सात पवर्षेण स्नानं तद् दिव्यमुच्यते ॥

तत्र स्नात्वा तु गंगायां स्नातो भवति मानव ॥ ११ ॥

और जब धूप निकली हो उसी समय वर्षा भी पड़े उसमें नहाने से दिव्य स्नान होता है उसमें नहाकर मनुष्य गंगा का स्नान करने हारा होता है ॥ ११ ॥

स्नातुं यातं द्विजं सर्वे देवाः पितृगणैः सह ॥

वायुभूतास्तु गच्छन्ति तृषार्ताः सलिलार्थिनः ॥ १२ ॥

जब द्विज स्नान करने को चलते तो उनके पीछे २ सारे देवता पितरों सहित वायु होकर ( हवा बनकर ) प्यासे हुए जल के लिए जाते हैं ॥ १२ ॥

निराशास्ते निवर्तते बस्त्रनिष्पीडने कृते ॥

तस्मान्न पीडयेद्बस्त्रमकृत्वा पितृतर्पणम् ॥ १३ ॥

जब धोती निचोड़े ले तो वे निरास हो फिर जाते इस हेतु तक पितृतर्पण न कर लेवे तब तार्ई धोती न धोवे ॥ १३ ॥



रोमकूपेष्ववस्थाप्य यस्तिलैस्तर्पयेत्पितॄन् ॥

तर्पितास्तेन ते सर्वे रुधिरैरामलेन च ॥ १४ ॥ 12 03६

जो मनुष्य अपने रोमके गतों पर तिल रखकर पितरों का तर्पण करता है वह मानो उन पितरों का रुधिर और मल से तर्पण करता है ॥ १४ ॥

अवधूनोतियः केशान्स्नात्वा प्रस्त्रवते द्विजाः ॥

आचमेद्वाजलस्थोऽपि सवाह्यः पितृदेवतैः ॥ १५ ॥

जो द्विज स्नान करके अपने केशों को फटकारता है, गीले कपड़ों से मूतने लगता अथवा सूखा वस्त्र पहिनकर जल में खड़ा हो आचमन करता है वह देव पितृ कार्य से वाह्य होता ( नहीं कर सक्ता ) है ॥ १५ ॥

शिरः प्रावृत्त्यकंठं वा मुक्तकक्षशिखोऽपि वा ॥

विना यज्ञोपवीतेन आचांतोऽप्यशुचिर्भवेत् ॥ १६ ॥

शिर अथवा गले में वस्त्र लपेट, कच्छ [ धोती के टोंक ] अथवा शिखा को खोल यज्ञोपवित के विना आचमन कर भी ले तथापि अशुद्ध रहता है ॥ १६ ॥

जले स्थले स्थानो चाभेज्जलस्थश्च वहिस्थले ॥

उभे स्पृष्ट्वा समाचामे दुमयत्र शुचिर्भवेत् ॥ १७ ॥

बाहर खड़ा होकर जल में और जल में खड़ा हो कर बाहर आचमन न करे यदि एक पांव जल में और एक बाहर रखे हो तो चाहे जिस प्रकार आचमन करे शुद्ध ही होता है ॥ १७ ॥

स्नात्वा पीत्वा क्षुते सुप्ते भुक्त्वा रथ्योपसर्पणे ॥

आचांतः पुनराचामेद्वा सोऽपि परिधाय च ॥ १८ ॥

स्नान, भोजन, जलपान छींक, सो और गली में चल कर दोवार आचमन करे इसी भांति वस्त्र पहिन कर भी ॥ १८ ॥

क्षुते निष्ठीवने चैव दंतोच्छिष्टे तथाऽनृते ॥



पतितानांचसंभाषे दक्षिणंश्रवणंस्पृशेत् ॥ १९ ॥

झींकने, थूकने, दांत में जूठा रहने सठ बोलने और पतितों के साथ बोलने पर दहिना कान झूलेवे ॥ १९ ॥

भास्करस्यकरैःपूतं दिवास्नानंप्रशस्यते ॥

अप्रशस्तंनिशिस्नानं राहोरन्यत्रदर्शनात् ॥ २० ॥

दिन में स्नान करना प्रशस्त है क्योंकि सूर्य की किरणों से वह पवित्र किया होता है ग्रहणके बिना रात में नहाना प्रशस्त नहीं है ॥ २० ॥

मरुतोवसवोरुद्रा आदित्याश्चाथदेवताः ॥

सर्वसोमेप्रलीयंतेतस्मादानंतुसंग्रहे ॥ २१ ॥

मारुत, वसु, रुद्र, आदित्य, और सारे देवता चंद्रमा में लुप्तजाते हैं इस हेतु ग्रहण में दान करना चाहिए ( कि देवताओं की रक्षा हो ) ॥ २१ ॥

खलयज्ञोविवाहेच संक्रांतिग्रहणेतथा ॥

शर्वयांदानमस्त्येववनाऽन्यत्रतुविधीयते ॥ २२ ॥

खल यज्ञ अर्थात् खलिहान, विवाह, संक्रांति, और ग्रहण में रात का दान करना और कभी भी रात को दान न करना चाहिए ॥ २२ ॥

पुत्रजन्मनियज्ञेचत्थाचात्ययकर्मणि ॥

राहोश्चदर्शनेदानं प्रशस्तंनान्यदानिनिशि ॥ २३ ॥

पुत्र जन्म यज्ञ मरण और राहु के दर्शन ( ग्रहण ) में रात के समय दान प्रशस्त होता है इससे अन्य समय में नहीं ॥ २३ ॥

महानिशातुविज्ञेयामध्यस्थं पूहरद्वयम् ॥

पूदोषपश्चिमौयामौदिनवत्स्नानमाचरेत् ॥ २४ ॥

जो बिचले दो पहर हैं वेहा महा निशा होती है और संस्थाको



महर तथा पिछले पहर की रात में दिन के तुल्य स्नान करना चाहिये ॥ २४ ॥

चैत्यवृक्षश्चितिःपूयश्चांडालःसोमविक्रयी ॥

एतस्त्वब्राह्मणःस्पृष्ट्वासवासाजलमाविशेत् ॥ २५ ॥

चैत्यवृक्ष ( अर्थात् इमशानके वृक्ष ) और चिति अर्थात् प्रसिद्ध कोई मृत्तिकादि समूह वा इमशान पूय ( अर्थात् दुर्गंध युक्त भज्जा वा पीव ) चांडाल, और सोमलता वेचने द्वारा यदि इनमें में किसी को ब्राह्मण छू लेवे तो वस्त्र सहित जल में स्नान करे ॥ २५ ॥

अस्थिसंचयनत्पूर्वं रुदित्वास्नानमाचरेत् ॥

अंतर्दशाहेविंप्रस्यहूयर्ध्वमाचमनंस्मृतम् ॥ २६ ॥

यदि अस्थि संचयन ( अर्थात् मरने के अनन्तर चार दिन ) के पूर्व यदि ब्राह्मण रोवे तो स्नान करके शुद्ध होता है उससे उपरांत दस दिन के भीतर रोवे तो आचमन मात्र करके पवित्र होता है ॥ २६ ॥

सर्वगंगासमेतोयं राहुग्रस्तेदिवाकरे ॥

सोमग्रस्तेतथैवोक्तं स्नानदानादिकर्मसु ॥ २७ ॥

सूर्य अथवा चन्द्रग्रहण में जो कोई जलस्नान दानादिक में मिले वही गङ्गा के समान फल देता है ॥ २७ ॥

कुशैःपूतंभवेत्स्नानं कुशेनोपस्पृशेद्द्विजः ॥

कुशेनचोद्भृतंतोयंसोमपानसमंभवेत् ॥ २८ ॥

कुशसे स्नान पवित्र होता है कुशके साथ ही ब्राह्मण आचमन कर जो जल कुशके साथ उठाया जाता है वह सोमपान के तुल्य होता है ॥ २८ ॥

अग्निकार्यात्परिभ्रष्टाः संध्योपासनवर्जिताः ॥

वेदंचैवानधीयानाः सर्वेतेबृषलाःस्मृताः ॥ २९ ॥

अग्निहोत्रसे परिभ्रष्ट ( कथुत वा विमुख ) संध्या वंदन छोड़े



हुए और वेद न पढ़ने हारे ब्राह्मण वृषल अर्थात् शूद्र के तुल्य होते हैं ॥ २६ ॥

तस्माद्वृषलभीतेन ब्राह्मणेनविशेषतः ॥

अध्येतव्योप्येकेदशो यदि सर्वेन शक्यते ॥ २७ ॥

इस हेतु अर्थात् वृषल होने के भयसे ब्राह्मणको चाहिये कि सारा न पढ़ता वेद का एक भागही पढ़लेवे ॥ २७ ॥

शूद्रान्नरसपुपस्याधीयमानस्यनित्यशः ॥

जपतो जुह्वतो वापि गतिरुर्ध्वानविद्यते ॥ २८ ॥

जो कोई शूद्र के अन्न और रसले पुष्ट है वह चाहे नित्य वेदाध्ययन, जप, और होम किया करे परन्तु उसकी उन्नति नहीं होता है ॥ २८ ॥

शूद्रान्नशूद्रसंपर्कः शूद्रेण तु सहासनम् ॥

शूद्रात्तज्ज्ञानागमश्चापि ज्वलन्तमपि पातयेत् ॥ २९ ॥

शूद्र का अन्न, शूद्र का संपर्क, शूद्र के साथ बैठना, और शूद्र ज्ञान सीखना, इन बातों से अग्नि समान तेज वाला भी प्रलय पातल हो जाता है ॥ २९ ॥

याशूद्यापाचयेन्नित्यं शूद्रीचगृहमेधिनी ॥

वर्जितः पितृदेवेभ्योरौरव्यातिसद्विजः ॥ ३० ॥

जिस द्विजकाणक शूद्री बनाती है और जिसकी गृहणी ( स्त्री ) शूद्री है तथा पितृ और देव कार्य से जो वर्जित ( विमुख ) है वह शौर्य नरक में जाता है ॥ ३० ॥

मृतकसूतकपुष्टांगं द्विजशूद्रान्नभोजिनम् ॥

अहंतन्नविजानामिकांकां योनिं गमिष्यति ॥ ३१ ॥

मरण और सूतक के आशौचवाला का अन्न खाने हारा तथा शूद्रका अन्न भोजन करने हारा ( अथवा शूद्र का अन्न उसके मृतक



सूतक में भोजन करने हारा ) द्विज यह नहीं जानते कि किस किस योनि में जावेगा ॥ ३४ ॥

गृध्राद्वादशजन्मानिदशजन्मानिसूकरः ॥

श्वयोनौसप्तजन्मानिद्वत्येवंमनुरब्रवीत् ॥ ३५ ॥

मनुने यों कहा है कि चारह जन्म गृध्र ( गिद्ध ) दसजन्म सूकर ( सूअर ) और सातजन्म कुत्ते की योनि में वह पड़ता है ॥ ३५ ॥

दक्षिणार्थतुयोर्विप्रः शूद्रस्यजुहुयाद्विः ॥

ब्राह्मणस्तुभवेच्छूद्रः शूद्रस्तुब्राह्मणोभवेत् ॥ ३६ ॥

यदि दक्षिणा के लोभ से ब्राह्मण शूद्रकी हवि ( खीर आदि ) होम करे तो वह ब्राह्मण शूद्रहो जाता है और वह शूद्र ब्राह्मण बन जाता है ॥ ३६ ॥

मौनव्रतंसमाश्रित्यआसीनो न वदेद्द्विजः ॥

भुजानेहि वदेद्यस्तुतदन्नं परिवर्जयेत् ॥ ३७ ॥

जिसने मौन होकर भोजन करनेका संकल्प किया हो और भोजन करते समय मेंही यदि बोलदिया हो तो जितना अन्न बच रहा हो उसे न खावे छोड़ दे ॥ ३७ ॥

अर्द्धभुक्तेतुयोर्विप्रस्तस्विक्पात्रे जलं पिवेत् ॥

हतं दैवं च पित्र्यं च आत्मानं चैव घातयेत् ॥ ३८ ॥

जो ब्राह्मण आधा तिहाई भोजन करते ही उसी भोजन पात्र में जल पीलेवे तो देवकार्य वा पितृकार्य तथा निज आत्मा को भी वह हत ( नष्ट ) करता है ॥ ३८ ॥

भुजानेषु तु विशेषु येषि पात्रं विमुञ्चति ॥

समूढः स च पापिष्ठो ब्रह्मघ्नः स खलु च्यते ॥ ३९ ॥

ब्राह्मणों के भोजन करते समय जो पहिले पात्र ( भोजन करना छोड़ देता है वह मूर्ख, पापिष्ठ, और ब्रह्मघ्न कहलाता है ॥ ३९ ॥

भाजनेषु च तिष्ठत्सु स्वस्ति कुर्वन्ति ये द्विजाः ॥

न देवास्तृप्तिमायांति निराशाः पितरस्तथा ॥ ४० ॥



भोजन पात्र उठने वा चलित होने नहीं पाए इसके बीचमें ब्राह्मण लोग यदि स्वस्ति बोल उठैतो देवता तृप्त नहीं होते और पितर लोग निरास होजाते हैं ॥ ४० ॥

अस्नात्वानैवभुंजीत अजप्त्वाग्निमपूज्यच ।

नपर्णपृष्ठेभुंजीतरात्रौ दीपं विना तथा ॥ ४१ ॥

विना स्नान, जप और अग्नि होत्रके किए ही भोजन न करे तथा पत्ते की पीठ पर भी भोजन न करे और रात के समय दीपक विना न भोजन करे ॥ ४१ ॥

गृहस्थस्तु दयायुक्तो धर्ममेवानुचितयेत् ॥

पोष्यवर्गार्थसिद्ध्यर्थं न्यायवर्ती स बुद्धिमान् ॥ ४२ ॥

जो गृहस्थ दयायुक्त होकर धर्मही की चिन्ता करे और अपने पोष्यवर्ग ( स्त्रीपुत्र भृत्य आदि ) की अर्थ सिद्धि के लिए न्याय वर्ती ( न्याय वा नीति पूर्वक चलता ) हो तो वही बुद्धिमान् कहाता है ॥ ४२ ॥

न्यायोपार्जितवित्तेन कर्त्तव्यं ह्यात्मरक्षणम् ॥

अन्यायेन तु यो जीवेत् सर्वकर्म बहिष्कृतः ॥ ४३ ॥

न्याय से जो धन उपार्जन करे उसी से अपने आपकी रक्षा करे और जो अन्याय से जीवन करे वह सब कर्मों से बहिष्कृत होता है ॥ ४३ ॥

अग्निचित्कपिलासत्री राजा भिक्षुमहोदधिः ।

दृष्टमात्राः पुनंत्योतितस्मात्पश्येत्तु नित्यशः ॥ ४४ ॥

अग्निहोत्री अथवा दृष्टका चयनकारी कपिलागौ, यज्ञकर्त्तृहारा, राजा, संन्यासी, और समुद्र, ये देखनेही से पवित्र करते हैं इस लिए इन्हें नित नित देखे ॥ ४४ ॥

अरणिं कृष्णमार्जारं च दनं सुमणिं घृतम् ॥

तिलान् कृष्णाजिनं छागं गृहे चैव निरक्षयेत् ॥ ४५ ॥

अरणि, ( जिसे सथकर यज्ञ में आगनिकालते हैं ) काली बिल्ली, चन्दन, अच्छी मणि, घी, तिल, कृष्णाजिन ( काले मृगाका चर्म ) और षकरा इतनी वस्तु घरमें रखनी चाहिये ॥ ४५ ॥



गवांशतसैकवृषंयत्रतिष्ठत्ययंत्रितम् ॥

तत्क्षेत्रदशगुणितंगोचर्मपरिकीर्तितम् ॥ ४६ ॥

जितनी दूरमें सौ गौ और एक बैल खुले हुए खड़े हों उससे दसमने स्थल को गोचर्म कहते हैं ॥ ७६ ॥

ब्रह्महत्यादिभिर्मर्त्योर्मनोवाक्कायकर्मभिः ॥

एतद्गोचर्मदानेन मुच्यतेसर्वकिल्बिषे ॥ ४७ ॥

यदि इस गोचर्मका दान मनुष्य करे तो ब्रह्म हत्यादिक जो मानसिक वाचिक और कायिक पाप हैं उन से छुट जाता है ॥ ४७ ॥

कुटुंबिनेदरिद्रायश्रोत्रियायविशेषतः ॥

यद्दानं दीयते तस्मै तद्दानं शुभकारकम् ॥ ४८ ॥

कुटुंब वाले दरिद्र और विशेष करके वेद पाठी ब्राह्मण को जो दान दे वह दान शुभ फल देने हारा होता है ॥ ४८ ॥

वापीकूपतडागाद्यैर्वाजपेयशतैर्मखैः ॥

गवांकोटिप्रदानेन भूमिहर्तान् शुद्ध्यति ॥ ४९ ॥

जो मनुष्य किसी की भूमि हर लेवे वह चाहे सैकड़ों वापी कूप, तडागा, अदि बनावे अथवा वाजपेय आदि सैकड़ों यज्ञ करे और कोटि गौ दान करे तो भी शुद्ध नहीं होता है ॥ ४९ ॥

अष्टादशदिनादर्वाक्स्नानमेवररजस्वला ॥

अत ऊर्ध्वं त्रिरात्रस्यादुशना मुनिरब्रवीत् ॥ ५० ॥

यदि अठारह दिन के भीतर ही स्त्री रजस्वला हो तो तीन दिन अशुचि होती है ऐसा उशना मुनि ने कहा है ॥ ५० ॥

युगं युगद्वयं चैव त्रियुगं च चतुर्युगम् ॥

चाण्डालसूतकोदक्यापतितानामधःक्रमात् ॥ ५१ ॥

पतित रजस्वला प्रसूति स्त्री, और चाण्डाल इन सबों से क्रम कर्के ४८९ और १३ हाथ के अंतराल से रहना ॥ ५१ ॥

ततः सन्निधिमन्त्रेण संचैलं स्नानमाचरेत् ॥

स्नात्वावलोकयेत्सूर्यमज्ञानात्स्पृशते यदि ॥ ५२ ॥



यदि इनमें के समीप वे आनपडै तो बस्त्र समेत स्नान करेगावे  
यदि अज्ञान से इन्हें छुलेवे तो स्नानकरके सूर्य का अवलोकन करे  
( ज्ञानसे स्पर्श में ८००- गिनती जप भी होता है ) ॥ ५२ ॥

विद्यमानेषुहस्तेषु ब्राह्मणोज्ञानदुर्वलः ॥

तौयंपिवेत वक्तेणश्वयोनौजायतेध्रुवम् ॥ ५३ ॥

हाथ रूते ही यदि कोई अल्प ज्ञानी ब्राह्मण नदी में झुह लगा  
कर पानी पीवे तो वह अवश्य कुरु की योनि में पडता है ॥ ५३ ॥

यस्तुक्रुद्धः पुमान् ब्रूयाज्जया यास्तुअगम्यातम् ॥

पुनरिच्छतिचेदेनां विप्रमध्येतुश्रावयेत् ॥ ५४ ॥

यदि कोई ब्राह्मण क्रुद्ध होकर अपनी स्त्री को अगम्यता ( अर्थात्  
माता वा भगिनी ) बोलदे और पुनः उसका संग किया चाह तो  
ब्राह्मणों की परिषत् के मध्य जाकर सुनावे ॥ ५४ ॥

श्रांतःक्रुद्धस्तमांधोवाक्षुत्पिपासाभयार्दितः ॥

दानं पुण्यमंकृत्वाप्रायश्चित्तिदिनत्रयं ॥ ५५ ॥

कि मैं श्रांत, ( थकाहुआ ) क्रुध, तमोध ( अज्ञानी अथवा क्षुधा  
और प्यास से किंवा भय से पीडित होकर ऐसा कह बैठा अथवा  
दान और तीर्थ यात्रादि पुण्य कर्मा कहकर न करे तो भी ब्राह्मणों  
को यही पूर्वोक्त कारण सुनावे और उनके कहने से तीन दिन  
उपवास करे ॥ ५५ ॥

उपस्पृशेत्त्रिषवणंमहानद्युपसंगमे ॥

चीरातेचैवगांदद्याद्ब्राह्मणान्भोजयेद्दश ॥ ५६ ॥

और समुद्र गामिनी नदी के संगम में त्रिकाल स्नान करे अन  
न्तर एक गौदान दे और दस ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ५६ ॥

दुराचारस्यविप्रस्यनिषिद्धाचरणस्यच ॥

अन्नंभुक्ताद्विजःकुर्याद्दिनमेकमभोजनम् ॥ ५७ ॥

जो ब्राह्मण दुराचारी ( विहित कर्मनकर्त्ता ) हो और जो निषि  
द्धा चरण ( अविहितकर्मकर्त्ता ) हो उसका अन्न यदि कोई द्विज  
भोजन करे तो एक दिन उपवास करे ॥ ५७ ॥



सदाचारस्यविप्रस्यतथा वेदान्तवादिनः ॥

भुक्त्वान्नमुच्यतेपापादहोरात्रन्तरान्तरः ॥ ५८ ॥

( यदि उपवास न कर सके ) तो किसी सदाचार ब्राह्मण तथा वेदाङ्गवेत्ता अथवा वेदान्तवादी ) ब्राह्मणका अन्न दूसरे २ दिनखावे तो उसपाप से मुक्त होजाता है ॥ ५८ ॥

ऊर्ध्वोच्छिष्टमधोच्छिष्टमंतरिक्षमृतौतथा ॥

कृच्छ्रत्रयंप्रकुर्वीत आशौचमरणेतथा ॥ ५९ ॥

यदि कोई ऊर्ध्वोच्छिष्ट ( वरुणादिसजूठेमुंह ) अधोच्छिष्ट ( मूत्र पुरीषसे अशुद्ध ) होकर अथवा खट्वा वा अहारी आदि अन्तरिक्षमें मर जावेतो उसके निमित्त तीन कृच्छ्र करानेसे ( अथवा व्रतके बदले उत्तरी गौदान देने से ) शुद्धहोता है यही प्रायश्चित्त आशौच में मरे हुए का भी है ॥ ५९ ॥

कृच्छ्रदेव्ययुतंचैवप्राणायामशतद्वम् ॥

पुण्यतीर्थेनार्द्रशिरः स्नानंद्वादशसंख्यया ॥ ६० ॥

एक अयुन १०००० गायत्री जपने से भी एक कृच्छ्रव्रत का फल होता है तथा दोसौ प्राणायाम करनेसे एककृच्छ्रहोता है, और किसी पुण्य तीर्थ में स्नान करे जब सिरके बाल सूखजावें पुनः स्नान करे इसप्रकार बारहबार स्नान करनेसे भी एक कृच्छ्रव्रतहोताहै ॥ ६० ॥

द्वियोजनंतीर्थयात्राकृच्छ्रमेकंप्रकल्पितम् ॥

गृहस्थःकामतःकर्याद्रितप्तःस्वलनभुवि ॥ ६१ ॥

द्वियोजन तीर्थकी और चले तो भी एक कृच्छ्रव्रत होता है यदि गृहस्थ अपनी इच्छासे वीर्य भूमि में गिरावे ॥ ६१ ॥

सतसंतुजपेद्देव्याःप्राणायामस्त्रिभिःसह ॥

चातुर्विद्योपपन्नस्तु विधिवद्विप्रघातके ॥ ६२ ॥

तो एक सहस्र गायत्री जपकर और तीन प्राणायाम करे जो ब्रह्म घातीहो उसको चारों वेद जानने हारा विप्र ॥ ६२ ॥

समुद्रसंतुगमनंप्रायश्चित्तसमादिशेत् ॥

सेतुंबधप्रथमिक्षांचातुर्वर्ण्यात्समाचरेत् ॥ ६३ ॥



समुद्रसेतु ( रामेश्वर के दर्शन के लिये ) गमन करनेका प्रायश्चित्तबतलावे सेतुबंधजातेहुए सागमें चारौवर्णोंके घरभिक्षामांगे ६३

वर्जयित्वाविकर्मस्थानलुत्रोपानाद्विवर्जितः ॥

अहंदुष्कृतकर्मावैमहापातककारकः ॥ ६४ ॥

विरुद्ध कर्म करने हारोंके घर भिक्षा न करे और छाता, जूता, पास न रखे तथा ऐसा कह कर भिक्षा मांगे कि मैं दुष्कृत कर्म करनेहारा महापातकी हूँ ॥ ६४ ॥

गृहद्वारेषुतिष्ठामिभिक्षार्थीब्रह्मघातकः ॥

गोकुलेषुचवनेचैवग्रामेषुनगरेषुच ॥ ६५ ॥

ब्रह्म घातक घरके द्वारपर भिक्षा के अर्थ खड़ा हो । गाँवों के मध्य ग्राम और नगरों में बासकरै ॥ ६५ ॥

तपोवनेषुतीर्थेषुनदीप्रसूवणेषुच ॥

एतेषुरव्यापयन्नैनः पुण्यगत्वातु सागरम् ॥ ६६ ॥

तपोवन, तीर्थ, नदी, झरने, इनस्थलों में अपना पापकहता हुआ पवित्र सागर में जाकर ॥ ६६ ॥

दशयोजनविस्तीर्णशतयोजनमायतम् ॥

रामचन्द्रसमादिष्टंनलसंचयसंचितम् ॥ ६७ ॥

दस योजन चौड़ा सौ योजन लंबा, रामचन्द्र के कथन से नल ने संचय कर्के रचितकिया ॥ ६७ ॥

सेतुं दृष्ट्वासमुद्रस्यब्रह्महत्यांव्यपोहति ॥

सेतुं दृष्ट्वाविशुद्धात्मात्ववगाहेतसागरम् ॥ ६८ ॥

ऐसे समुद्र सेतुको देखकर ब्रह्महत्या से छूटजाता है सेतुदर्शन से शुद्धदेहहोकर समुद्रमें स्नानकरे ॥ ६८ ॥

यजेतवाश्वमेधेनराजातुपृथिवीपतिः ॥

पुनःप्रत्यागतोवेश्मवासार्थमुपसर्पति ॥ ६९ ॥

यदि पृथ्वी का पति राजा हो तो अश्वमेध यज्ञ करने से ब्रह्महत्या से बूझता है पुनः घर में आकर वास करे ॥ ६९ ॥



सपुत्रःसहभृत्यश्चकुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥

गाश्चैवैकशतंदद्या चातुर्विद्येषुदक्षिणाम् ॥ ७० ॥

पुत्र और भार्या तथा भृत्यों समेत ब्राह्मणों को भोजन करावे और चारों वेद जानने हारे ब्राह्मणों को एक सौ गौदक्षिणादेवे ॥ ७० ॥

ब्राह्मणानांप्रसादेन ब्रह्महातुविमुच्यते ॥

विंध्यादुत्तरतोयस्यसवांसःपरिकीर्तितः ॥ ७१ ॥

और ब्राह्मणों की प्रसन्नता से ब्रह्मघाती शुद्ध होता है जिसका निवास विंध्य पर्वत के उत्तर भाग में हों ॥ ७१ ॥

पराशरमतंतस्यसेतुबंधस्यदर्शनम् ॥

सवनस्थांस्त्रियंहत्वाब्रह्महत्याव्रतं चरेत् ॥ ७२ ॥

उसी को पराशर के मत से सेतुबंध का दर्शन विहित है यज्ञ कर्त्ता हुई स्त्री को मारे तो ब्रह्महत्याका व्रत करे ॥ ७२ ॥

मद्यपश्चद्विजःकुर्यान्नदीं गत्वासमुद्रगाम् ॥

चांद्रायणे तपश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ७३ ॥

मद्यपि ब्राह्मण भी ब्रह्म हत्या व्रत करे और समुद्र गामिनी नदी में स्नान कर के चान्द्रायण करे तदनंतर ब्राह्मण भोजन करावे ॥ ७३ ॥

अनदुत्सहितांगांच दद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥

सुरापानं सकृत्कृत्वा अग्निवर्णासुरांपिवेत् ॥ ७४ ॥

एक बैल और गौ ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे जो एकवार सुरा ( मद्य ) पीकर अग्नि समान तप्त कर्के सुरा पीकर मरजावे ॥ ७४ ॥

सपावयेदिहात्मा मिहलोके परत्र च ॥

अपहृत्य सुवर्णं तु ब्रह्मणस्य नतः स्वयम् ॥ ७५ ॥

तो अपने आत्मा को इस लोक और परलोक दोनों में शुद्ध कर्ता है यदि ब्राह्मण के सुवर्ण चोरी करे तो अपने ही आप ॥ ७५ ॥

गच्छेन्मुसलमादाय राजानं स्ववधाय तु

हतः शुद्धिं सवाप्नोति राजाऽसौ मुक्त एक च ॥ ७६ ॥

हाथ में मुसल लेकर राजा के पास अपने वध के अर्थ जावे



राजा उससे मारे तो शुद्ध होता है और राजा उसे छोड़दे तो भी शुद्ध होजाता है ॥ ७६ ॥

कामतस्यतुकृतंयत्स्थान्नान्यथावधमर्हति ॥

आसनाच्छुयनाद्यानात्सभाषात्सहभोजनात् ॥ ७७ ॥

यदि जान बूझकर ब्राह्मण का सोना चुराया हो तब उसका वध करना अव्यथा वध के योग्य नहीं होता है एकत्र बैठने और सोने से तथा एकही सवारी पर चढ़कर चलने और साथ भोजन करने से ॥ ७७ ॥

संक्रामंतीहिपापानि तैलविन्दुरिवांसि ॥

चांद्रायणयावकंच तुलापुरुषएवच ॥ ७८ ॥

एक को पाप दूसरे को उसे भांति लगजाता है जैसे तैल काविन्दु पानी में फैल जाता है चान्द्रायण यावक, तुलापुरुष, ॥ ७८ ॥

गवांचैवानुगमनंसर्वं पापप्रणाशनम् ॥

एतत्पराशरंशास्त्रं श्लोकानांशतपंचकम् ॥ ७९ ॥

और गौओं के पीछे २ चखना इन से हर एक प्रकार का पाप नष्ट होता है ॥ ७९ ॥

द्विनवत्यासमायुक्तं धर्मशास्त्रस्यसंग्रहः ॥

यथाध्ययकर्माणिधर्मशास्त्रमिदंतथा ॥ ८० ॥

यह पराशर का बनाया हुआ पांच सौ और वानमें श्लोक का धर्म शास्त्र संग्रह है जैसे वेदाध्ययन से पुण्य होता है उसी प्रकार इस धर्म शास्त्र के पढ़ने से भी पुण्य है ॥ ८० ॥

अध्येतव्यप्रयत्नननियतंस्वर्गकामिना ॥

इति श्रीपाराशरेधर्मशास्त्रेसकल प्रायश्चित्तनिर्णयो

नामद्वादशोऽध्यायःसमाप्तः ॥ १२ ॥

इस हेतु जो स्वर्ग कामना करे वह नियम पूर्वक इसे पढ़े ॥ इति श्री पराशर धर्म शास्त्र भाषा विवृत्तौ पण्डित गुरु प्रसाद कृतायां सकल प्रायश्चित्त निर्णयो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

॥ इति श्री पाराशर स्मृतिरियं पूर्तिमागमत् ॥







✽ विज्ञापन ✽

## श्रीभगवद्गीता भाषा ।

आजकल भारतवर्ष में अज्ञानता प्राप्त को देखकर स्त्री पुरुष के दूर करने के लिये परम-हितैषी मित्रोंने कई बार मुझ पे कहा कि कोई पुस्तक होना चाहिये कि जिससे स्त्री पुरुष के लिये शिक्षा हो और सरल हिन्दी भाषा हो जो कि समझ में आ जाय मैंने सोचा कि आजकल गीता से बढकर कोई संसार में पुस्तक नहीं है सोई भगवद्गीता सरल हिन्दी भाषामें खूब मोटे अक्षरों में छापकर प्रकाशित किया गया है जिसमें अठारह अध्याय का माहात्म्य भी पृथक् २ पुराणोक्त लिखा गया है कि जिसके पढने से ज्ञान प्राप्त होता है जिन महाशयों को आवस्यक्ता होवे शीघ्र भंगा लेवें अगर पुस्तक बिक गई तो पछतावा ही हाथ रहेगा।

पुस्तक मिलने का पता—

बाबू हरिनारायण वर्मा बुक्सेलर,

कचौड़ीगली बनारस सिटी ।



